मनीषी चाणक्य।

सचित्र ऐतिहासिक जीवन-चरित्र।

लेखक—

पं० रामशंकर त्रिपाठी।

प्रकाशक—

पाठक एण्ड कम्पनी,

नं० ७१ बी, वाराणसी घोष स्ट्रीट,

कलकत्ता।

— ० —

प्रथमवार]

१९२५

[मूल्य १।)

प्रकाशक—
चन्द्रशेखर पाठक
७३ बी, वाराणसी घोष स्ट्रीट,
कलकत्ता।





समर्पण

हिन्दी, हिन्दू और हिन्दके

अनन्य सेवक—

श्रीमान

बाबू राधाकृष्णजी नेवटिया

के

पाणि पद्मों

में

सानुराग समर्पित

—रामशंकर

भूमिका ।

वर्तमान प्रत्न तत्वके युगमें मौर्य-कालका परिचय देना अनावश्यक है। क्योंकि भारतवासी मात्र भारतके अतीत गौरवकी बातोंसे पूर्ण परिचित हैं। जातीय अवसादके युगमें, शक्ति हीनताके कालमें और वैदेशिक दासताके समयमें, अतीत-स्मृति ही हमलोगोंके जातीय जीवनका प्रधान उपजीव्य है। वर्तमान समयमें हमारे पास गौरव करने योग्य कुछ नहीं है, स्पर्द्धा करनेके लायक कुछ नहीं है। है सिर्फ दारिद्र्य, अत्याचार और उत्पीड़न। यद्यपि ऐसी दशामें अतीत स्मृतिके जागरूक होनेपर हृदयका दुःख और भी बढ़ जाता है, तथापि विगत गौरवकी बातोंके स्मरणसे विषादके साथ साथ हर्ष भी उत्पन्न होता है। शोक और दुःखमें फिर आत्म मर्यादाका उद्रेक होता है, हीयमान शक्ति और तेज फिर दृप्त होता है और जीमें आता है कि, हमलोग भी किसी समय मनुष्य थे, हममें भी शक्ति थी, शौर्य था, बल था। क्रमशः उसका अपचय होकर जातीय जीवनमें अवसाद उत्पन्न हो गया है। यत्न करनेपर फिर हमलोग मनुष्य हो सकते हैं।

संसारमें सदैव बलवानकी ही विजय होती है। वसुन्धरा चिरकालसे ही "वीर भोग्या" है। मनुष्य समाजमें रहकर "अधिकार अधिकार" चिल्लाता रहता है, लेकिन इस अधिकारका मूल शक्ति है, शक्तिके बिना अधिकार स्थायी नहीं रहता। प्राकृतिक

नियमानुसार जीव-मात्र संसारमें अपने अपने 'भोग' का निरूपण करता है। किन्तु इस भोगको लेकर ही विवाद है। जो बलवान् है, वही भोगका अधिकारी होता है, दूसरा नहीं। निर्बलको तो दासत्व करना पडता हैं। दीनता स्वीकार कर दासत्वका भार सिरपर लादते हुए दूसरेकी सेवा करनी पडती है। यदि विजेता का स्वार्थ हुआ, तो उसके प्राणोंकी रक्षा होती है, दासत्व जीवनकी भी सत्ता रहती है, अन्यथा उसका चिन्ह भी विलुप्त हो जाता है। चिरकालसे यही रीति चली आ रही है, और सम्भवत चलेगी भी। युद्ध लेकर ही जगत् और उसकी सभ्यता वर्त्तमान है। एक ओर मनुष्य प्राकृतिक शक्तियोंके साथ संग्राम करता रहता है, और दूसरी ओर प्राकृतिक शक्तियोंको करायत्त कर, और भी बलवान् होकर, दुर्बलके अधिकार और सत्ताका विलोप करता रहता है। विज्ञानकी ओर तथा प्राकृतिक नियमोंकी ओर देखनेपर हम यही उपदेश प्राप्त करते हैं। मानव भिन्न जीव जगत् और उद्भिज् जगत्‌में भी यही नियम है।

अवश्य ही आजकल प्रतीच्य-जगत्‌के दार्शनिक युद्ध विग्रहको उठा देनेकी चेष्टा कर रहे हैं, लेकिन उनकी इस चेष्टाका सफल होना बडा कठिन मालूम होता है। कारण इस विचारके मूलमें एक दूसरेके प्रति सहानुभूति अथवा परस्परके स्वत्व-रक्षणकी स्पृहा नहीं है। एक दल—जो भूमण्डलव्यापी साम्राज्यका नायक है, युद्ध नहीं चाहता है। उसका कथन है कि, जो कुछ है, उसकी रक्षा कर सकना ही यथेष्ट है। और दूसरी ओर

जापान प्रभृति उदीयमान जातियां बाहु बलसे अपने प्रताप और सामर्थ्य बढ़ानेकी अभिलाषिणी हैं। एक ओर शान्ति और परिरक्षण स्पृहा है, और दूसरी ओर आकांक्षा और लाभका प्रयास। ऐसी अवस्थामें युद्ध विग्रहका विलोप नहीं हो सकता। केवल बातोंसे कोई कार्य नहीं होता। विजित जाति समूह सदैव विजेताओंके निरंकुश शासनके नीचे रहकर उनका पद-लेहन कदापि नहीं करेगा। वह भी दासत्व शृंखलाके उन्मोचनकी चेष्टा करेगा। परिणाम स्वरूप युद्ध विग्रह बना रहेगा। एव भविष्यमें और भी भयावह और लोक-क्षयकारक हो जायगा।

प्राचीन भारतके मनीषी भी इस शक्तिके प्राधान्यमें विश्वास करते थे। आध्यात्मिक उन्नतिमें मनोनिवेश करनेपर भी वे लोग जगत्में बल अथवा शक्तिके प्राधान्यको स्वीकार करते थे। "नायमात्मा बलहीनेन लभ्य" यह उपदेश उपनिषद्में भी उपलब्ध होता है। परवर्ती युगमें भी भारतवासी इस सत्यका आदर करनेमें पराङ्मुख नहीं हुए। क्षत्रियोंका प्रधान धर्म ही था, रण दीक्षा, बाहु बल और शत्रु-विनाशन। क्षत्रियेतर जातियाँ भी अन्य उपायोंसे समाजके उत्कर्ष साधनमें प्रवृत्त होती थीं। मौर्य युगके बहुत पहलेसे भारतवर्षमें शक्तिकी उपासना प्रचलित हुई थी। महाभारत और रामायणमें भी इसके अनेक प्रमाण पाये जाते हैं।

मनीषी चाणक्य मौर्य-शासनके प्रवर्त्तकोंमेंसे थे। मौर्ययुगके गौरवका कारण प्रधानतया उनकी अद्भुत बुद्धि और अपूर्व विवे-

चना शक्ति है। प्रथम मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्तके वे प्रधान सचिव थे। बहुत सामान्य अवस्थासे उन्होंने अपने बुद्धि-बलसे लोकोत्तर उन्नति प्राप्त की थी। उनके लिखे हुए अर्थ शास्त्रको पढ़कर बड़े-से बड़े विदेशी कूटनीतिज्ञ दांतों तले उँगली दबाते हैं। उनकी इस अद्भुत कृतिको देखकर विचारशील विद्वान् विस्मित हो जाते हैं। वे चाणक्यकी भी शक्तिके प्राधान्यमें विश्वास रखते थे। उन्होंने अपने अर्थ शास्त्रमें अपनी इस सम्मतिको बड़े सुन्दर ढगसे प्रतिपादित किया है। महात्मा चाणक्यके असाधारण, घटना-बहुल जीवनसे हमलोग अनेक शिक्षाएँ प्राप्त कर सकते हैं। एक साधारण ब्राह्मणके घरमें जन्म लेकर उन्होंने वह काम कर दिखलाया, जिसके करनेमें बड़े बड़े हिचकते हैं। अत्याचारी नन्द वंशका विध्वंस करके उन्होंने भारतवर्षमें प्रकृत क्षत्रिय राज्य प्रतिष्ठित किया था। उन्हें आत्म मर्यादाका असाधारण ज्ञान था। देशात्म बोध भी कम न था। उनका समग्र जीवन अन्यायके—अत्याचारके मिटानेमें अतिवाहित हुआ, और ज्योंही उनका कार्य समाप्त हुआ है, त्योंही वही ब्राह्मणोचित चिर दारिद्र्य अंगीकार करके अनन्तकी खोजमें, परमात्माको दिव्य-विभूतियोंको प्रत्यक्ष करनेके लिए, योगानुष्ठान द्वारा आत्म ज्ञानका स्वयं प्रकाश अनुभव करनेके लिए, प्राचीन ऋषियों द्वारा दिखलाये हुए मार्गका उन्होंने अनुसरण किया। राज्य वैभव, विलास लालसा, ऐहिक कीर्तिकामना एकक्षणके लिए भी उनके हृदय पर अपना आधिपत्य नहीं जमा सकी।

चाणक्यके जीवनकी जो कुछ सामग्री हमें मिल सकी हैं, उसीको लेकर हमने इस पुस्तककी रचना की है। उस समयका धाराबाहिक इतिहास नहीं मिलता, और जो कुछ मिलता है, वह भी निर्विवाद नहीं है। अत इस पुस्तकमें गलतियोंका रह जाना स्वाभाविक ही है। फिर भी मैंने यथासभव इसे प्रामाणिक बनानेका प्रयत्न किया है। इसके लिखनेमें मुझे बाबू अरुणचन्द्र गुप्त प्रणीत (बगला) चाणक्यसे बड़ी मदद मिली है। इसका अधिकाश उसी पुस्तकका है। बाकी मैंने अनेक ग्रन्थोंको पढ़कर लिखा है। इच्छा रहते हुए भी बाहुल्य-भयसे चाणक्य नीति और काम सूत्रके सबधमें इसमें कुछ नहीं लिखा जा सका। यदि कभी इसके द्वितीय सस्करणका अवसर आयेगा तो उसे सम्मिलित करनेका प्रयत्न करूँगा। बहुत सभव है, चाणक्यके सम्बन्धकी अनेक ऐसी बातें छूट गई हों—जिनका देना बहुत जरूरी था, लेकिन यह मेरी अज्ञताजन्य भूल है, अतएव क्षम्य है। विदेशी इतिहासकारों द्वारा लिखे हुए ग्रन्थोंसे मैं सहायता नहीं ले सका अतएव उस दृष्टिसे पुस्तकमें कुछ अपूर्णता रह गई है। लेकिन इस अपूर्णताको दूर करना इस समय मेरी शक्तिके बाहर है।

मतवाला मण्डल
२३, शकर घोष लेन,
कलकत्ता।

रामशंकर त्रिपाठी।

बालग्रन्थमालामें प्रकाशित सचित्र

उत्तमोत्तम पुस्तकें—

राजर्षि ध्रुव	॥=)	भीष्म पितामह	॥=)
भक्त प्रह्लाद	॥=)	चक्रवर्ती यण्वाराव	॥=)
वीर अर्जुन	॥=)	सती शर्म्मिष्ठा	॥=)
वीर अभिमन्यु	॥=)	सती पद्मिनी	॥=)

अन्यान्य उत्तमोत्तम पुस्तकें।

वाराङ्गना रहस्य	५)	नन्दन भवन	॥=)
पृथ्वीराज	१।)	अँगरेजी शिक्षावली	१।)
महात्मा गान्धी	१)	उद्भ्रान्त प्रेम	॥)
दाम्पत्य विज्ञान	२)	जनन विज्ञान	३)

पाठक एण्ड कम्पनी,

७३ वी वाराणसी घोष स्ट्रीट

कलकत्ता।

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ

चित्र-सूची।

मनीषी चाणक्य



बाल्य-जीवन ।

मनीषी चाणक्य भारतवर्षके राजनीतिक क्षेत्रमें एक संकटके युगमें आविर्भूत हुए थे। इस राजनीति विशारद-ब्राह्मणने स्वेच्छाचारी सम्राटों द्वारा शासित भारतवर्षमें जिस अपूर्व चतुरतासे एक शान्तिपूर्ण और समृद्धि-शाली साम्राज्यको प्रतिष्ठा की थी, जिस प्रकार बाहरी दुश्मनोंकी चढ़ाइयाँ व्यर्थ की थीं, साम्राज्यको आन्तरिक शृङ्खलाकी रक्षाके लिए जिन कायदा कानूनोंका निर्माण किया था, वे विधान आधुनिक संसारके सर्वश्रेष्ठ राजनैतिक पुरुषोंके विचारोंके साथ मिलाकर आलोचना करनेके योग्य हैं। महामति चाणक्यने सिर्फ मन्त्रित्व ही नहीं किया था, प्रत्युत उनकी असाधारण बुद्धि भारतवासियोंके नैतिक जीवनपर भी कई शताब्दियोंसे आलोक वितरण कर रही है। उनके

बनाये हुए अमूल्य श्लोक आज भी 'चाणक्य-नीति' के नामसे भारतवर्षके प्राय सब स्थानोंपर आदर-पूर्वक पढ़े जाते हैं। इस प्रकारके राष्ट्र-गुरुके विचित्र और कर्ममय जीवनका घटना बहुल इतिहास, अनेक प्रकारसे विस्तृत होकर आश्रुति मूलक कहानीमें परिणत हो गया है। इस जीवनकी इधर उधर बिखरी हुई सामग्री और जनश्रुतियोंसे प्रकृत सत्यका निरुपण करना बहुत कठिन है। असाध्य नहीं तो दुस्साध्य अवश्य है। जो सामग्री है, वह भी चाणक्यकी जीवनीके लिखनेके लिए पर्याप्त नहीं है। तथापि उनका अवलम्बन किए बिना और दूसरा उपाय नहीं है।

इतिहास प्रसिद्ध तक्ष शिला नगरमें धन धान्य सम्पत्तिशाली, महा गृहस्थ ब्राह्मण वरेण्य महात्मा चणकदेव नामक ब्राह्मणके घरमें ३१६ पू० में चाणक्यने जन्म ग्रहण किया था। इनके अनेक नाम थे, जैसे विष्णुगुप्त, कौटिल्य, पक्षिल इत्यादि। परन्तु चाणक्य नामको सबसे अधिक प्रसिद्धि है। चाणक्यके पिता तीन वेदोंके पार दर्शी पण्डित थे, अतएव 'त्रिवेदी' नामसे मशहूर थे। जिन्होंने अपने जीवनमें आगे चलकर, एक महामनीषीके रूपमें, भारतको आदर मिश्रित और विस्मय-पूर्ण दृष्टि आकर्षित की थी। उनका लड़क पन भी मामूली लड़कोंकी तरह न था। उनकी बाल सुलभ चपलतामें भी उनके भविष्यके महत्वके लक्षण दिखलाई पड़ते थे।

उनकी बाल क्रीडामें भी भविष्यकी गुण राशिका यथेष्ट आभास था। वे भविष्यमें जिस महायज्ञके पुरोहितके रूपमें वरण किये गये थे। लड़कपनसे ही अपनेको अपने ही अनजानमें वे

उसके लिए तैयार कर रहे थे। वे लड़कपनमें 'राजा-मन्त्री' के खेलमें खुद मन्त्री बनते, और विद्वानोंको तरह ऐसी ऐसी बातें कहते, जिन्हें सुनकर बड़े बूढ़े भी निर्वाक् हो जाते थे। वे मामूली लड़कोंकी तरह सिर्फ 'दौड़ धूप' के खेलसे सन्तुष्ट न होते थे। छोटे छोटे लड़कोंको इकट्ठा करके राज-काजका सञ्चालन करते थे। कभी कभी एक उपयुक्त लड़केको राजा बनाकर उसे युद्ध विद्याकी शिक्षा देते थे और आत्म-रक्षा करना सिखलाते थे। कभी कभी उस राजाको सिंहासनपर बिठलाकर, आप स्वय उसके मंत्री होकर सलाह-परामर्श देते थे। और कभी पाठशाला बनाकर अपने साथियोंके साथ शास्त्रोंकी आलोचनायें किया करते, और उन लोगोंको गुरुकी तरह उपदेश दिया करते थे।

चाणक्य लड़कपनमें जैसे चचल थे, वैसे ही तेजस्वी भी। उनके हृदयमें आत्म-सम्मानका ज्ञान बहुत लड़कपनसे ही स्फुरित हो चुका था। वे स्वेच्छासे कोई अन्याय कार्य न करते थे। दैवात् यदि कोई गर्हित काम कर बैठते, तो बहुत लज्जित होते थे। लेकिन जो कार्य उन्हें उचित प्रतीत होता था, उससे उन्हें निवृत्त करना असम्भव था। इसलिए कभी कभी दूसरोंके मना करनेपर भी, अपने मनसे जो कुछ अच्छा समझते, कर बैठते थे, और इस प्रकार उनके द्वारा अन्याय कार्य हो जाता था।

उनके पिताकी मृत्युके बाद, उनकी माता, पुत्रकी देहमें राज चिह्न देखकर एक दिन रो रही थीं। चाणक्यने मातासे उनके रोनेका कारण पूछा, और माताने सब हाल पुत्रसे बतला

दिया। माताकी बात सुनकर चाणक्यने कहा कि,—"अगर मैं राजा होऊँगा, तो तुम्हारी भलाई ही होगी। अतएव, तुम क्यों व्यर्थ रो रही हो?"

माताने कहा,—"जब तुम राजा होगे, तब हमें भूलजाओगे।" चाणक्यने माताकी शंका दूर करनेके लिए कहा,—"मैं अपनी देहके राजचिन्ह-स्वरूप दो दाँतोंको उखाडकर फेंक देता हूँ।" यह कह कहकर उन्होंने अपने दो दाँतोंको उखाडकर फेंक दिया। दाँतोंके उखाड डालनेसे वे न सिर्फ राज चिन्ह-वर्जित हो गए, प्रत्युत बहुत कुत्सित भी हो गये। हिन्दू शास्त्रोंके अनुसार विकलांग व्यक्ति राजा नहीं हो सकता।

चाणक्यके स्वभावमें बालकोचित चञ्चलता और उपद्रवकी मात्रा यथेष्ट थी। किसी मनुष्यको मिट्टीके घडेमें पानी भरकर लाते देखकर वे ईंटोंसे उसे फोड देते थे। फूटे हुए घडेके जलसे जल-धारकको तर होते देखकर, उन्हें असीम आनन्द प्राप्त होता था।, वह मनुष्य, यदि चाणक्यकी मातासे उनकी शिकायत करता था, तो वे घडेका उपयुक्त मूल्य देकर उसे सन्तुष्ट कर दिया करतीं और चाणक्यसे बराबर ऐसे कामोंको छोड देनेके लिये कहा करतीं थीं। एक दिन चाणक्यने ऐसी ही दुष्टतावश, एक लडकेके घडेको लक्ष्य करके कंकड फेंका, लेकिन लक्ष्य-भ्रष्ट हो जानेके कारण वह कंकड कलसीमें न लगकर बालकके मस्तकपर लग गया और मस्तकसे 'झर झर' करके रक्त स्राव होने लगा। चाणक्यको अपने इस अन्याय कार्यसे मर्मान्तक दुःख हुआ।

वे किस तरह अपनी माँको मुँह दिखलायेंगे, इसी चिन्तामें पड गये।

वह लडका रोता हुआ चाणक्यकी माताके पास पहुँचा, और अपनी 'राम कहानी' कह सुनाई। चाणक्यकी माताको उसकी हालतपर बड़ा तर्स आया, और उन्होंने द्रवित होकर उसकी यथेष्ट सेवा-सुश्रूषा की, जब वह लडका कुछ स्वस्थ हुआ, तो उसे कुछ पैसे देकर उसके घर भेज दिया।

चाणक्य भी लुकते-छिपते घर तक पहुँच गये, लेकिन घरके भीतर माताके सम्मुख आनेकी हिम्मत न पडी, और बाहर ही छिपकर घरका रंग-रंग देखने लगे। उनकी मा घरमें उनको खूब 'धक भक' रही थीं। चाणक्य बाहर खडे बडी देरतक इस प्रकारका 'तिरस्कार' सुनते रहे। लेकिन कुछ देर बाद जब यह असह्य हो गया, तब उनका सब सकोच दूर हो गया। उनकी विशाल आँखे क्रोधसे जल उठीं। और उन्होंने कहा,—"माँ मैं तो खुद ही अनुतप्त हूँ, फिर तुम मेरा तिरस्कार क्यों कर रही हो?" इसके बाद उनकी माँने उन्हें फिर कभी कुछ नहीं कहा।

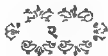
चाणक्यके स्वभावको क्रमश और भी उद्धत होता देखकर माताने उनके व्याहकी चर्चा छेडी। लेकिन चाणक्य व्याहको बडी घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। वे बराबर व्याहकी बातोंपर विरक्ति प्रकाश करते थे। माताके बार बार अनुरोध करने और आत्मीय स्वजनोंके उत्पीडनसे अपना बचाव न होता देखकर उन्होंने गृह त्याग करनेका निश्चय किया। अपना यह निश्चय—यह सकल्प

उन्होंने सबको सुना भी दिया। लेकिन उनका यह उद्देश्य सफल न हुआ। उनकी स्नेह मयी माताने पुत्रको इस कार्यसे विरत करनेके लिए यथा साध्य चेष्टा की। चाणक्य ही उनके एक मात्र लड़के थे। पतिकी मृत्युके बाद उन्हींका मुँह देखकर, वे अबतक अपना जीवन धारण कर रही थीं। इच्छा थी कि बड़े होनेपर उनका व्याह करके छोटी सी बहू घरमें लायेंगी, फिर गृहस्थी आनन्द पूर्ण हो जायगी। लेकिन पुत्रके सन्यासी होनेके संकल्पको सुनकर उनका यह 'आशा-महल' भहरा कर बैठ गया। उन्हें असीम दुःख हुआ, उन्होंने चाणक्यसे दृढ स्वरसे कहा,—"बेटा, यदि तुम व्याह नहीं करोगे, तो मैं इस जीवनको इसी क्षण त्याग दूँगी।" चाणक्य जानते थे कि, उनकी माता दृढप्रतिज्ञ हैं। लाचार होकर उन्होंने व्याह करनेके लिए अपनी राय दे दी। माता पुत्रकी सम्मति पाकर यथेष्ट आनन्दित हुई।

विवाहके लिए धूम मच गयी। चारों ओर 'उपयुक्त कन्या' की खोज होने लगी। लेकिन चाणक्य इतने कुत्सित और कदाकार थे कि, किसीने भी उन्हें अपनी कन्या सौंपनेका साहस न किया। अन्तमें—बड़ी मुश्किलके बाद एक ब्राह्मणने चाणक्यके साथ अपनी कन्याका व्याह करना मंजूर किया।

विवाहका निर्दिष्ट दिन आ पहुँचा। वर यात्रियोंके साथ चाणक्य व्याह करनेके लिए ससुराल जा रहे थे। रास्तेमें किसी तरह उनके पैरमें एक कुश गड़ गया, पैरसे रक्त धारा बह

निकली। हिन्दू-शास्त्रके अनुसार चाणक्यका विवाह बंद हो गया। वर यात्रियोंके साथ चाणक्य व्यर्थ मनोरथ होकर लौट आये। उनकी माँ इस संवादको सुनकर मर्माहत हुई। लेकिन चाणक्य फिर सदाके लिए विवाह बन्धनसे मुक्त हो गये। फिर किसीने उनसे व्याह करनेके लिए अनुरोध या उत्पीड़न नहीं किया। युवक चाणक्यका समय फिर उसी प्रकारसे व्यतीत होने लगा।



कार्यारम्भ।



लगभग डेढ़ हजार साल पहले मगध साम्राज्यमें एक क्षमताशाली नरपति राज्य करते थे। उनका नाम था—महापद्म नन्द। वे क्षत्रिय-जातिके थे। महाराज नन्दके दो स्त्रियाँ थीं। पहलीका नाम था सुनन्दा, और दूसरीका नाम था मुरा। मुरा शूद्र-वंशकी थी, लेकिन बहुत सुन्दरी और बुद्धिमती थी। सुनन्दाके ६ लड़के थे, वे 'नन्द' नामसे सम्बोधित

होते थे। मुराके एक लड़का था, उसका नाम था—चन्द्रगुप्त। यद्यपि महाराज महापद्मनंद बहुत ही क्षमता शाली थे, तथापि वे किसी कारण वश प्रजाके विराग भाजन हो उठे थे। उन्होंने अपनी अद्भुत क्षमताके बलसे प्रभूत सम्पत्ति संचितकी थी, लेकिन उसे सत्कार्यों अथवा जनताके उपकारमें कभी खर्च न करते थे।

वे अत्यन्त निष्ठुर और स्वार्थ-परायण थे। किसीको दुःखित देखकर उनके हृदयमें जरा भी दया न होती थी।

उनके दो सचिव थे। प्रधान मन्त्रीका नाम था चन्द्रभास और दूसरेका नाम था राक्षस। दोनों ही ब्राह्मण थे। चन्द्रभास बहुत विचक्षण और बुद्धिमान् थे। वे असाधारण सामर्थ्य वान् थे। राज काज दर असल वही करते थे। राक्षस चन्द्रभासकी अलौकिक प्रतिभा और दैत्य गुरू शुक्राचार्यके सदृश बुद्धि देख कर, मन ही मन ईर्षा करते थे। उन्होंने चन्द्र भासका मन्त्रित्व नष्ट करनेके लिए एक विराट् षडयन्त्रकी रचना की, उन्होंने एक चतुर और विश्वासी ब्राह्मणको चन्द्रभासकी सेवामें नियुक्त करा दिया। वह ब्राह्मण, राक्षसका एकान्त हितैषी और गुप्तचर था। उसने कौशलसे चन्द्रभासकी नामांकित अंगूठी आत्मसात् कर ली, और उसे लाकर राक्षसको दे दिया।

उस अंगूठीको पाकर राक्षसने एक मन गढ़न्त पत्र लिखा, उसमें वे उपाय लिखे हुए थे, जिनके द्वारा नन्दवंशका समूल ध्वंस हो सकता था। पत्र लिफाफेमें बन्द था, और उसपर 'पर्वतक' का नाम लिखा हुआ था। 'पर्वतक किसी म्लेच्छ

देशका राजा था। पत्रमें जहाँ दस्तखत होने चाहिये थे, वहाँ चन्द्रमासके नामांकित अँगूठीकी छाप दी गई थी। पत्रका संक्षेपमें आशय यह था कि, "नन्दवंशको ध्वंस करके और आपको सिंहासनपर प्रतिष्ठित करके, एक अभिनव राज्यकी स्थापना करेंगे।"

यह पत्र राक्षसने अपने पूर्वोक्त ब्राह्मण जासूसके द्वारा भेजा, और इधर सिपाहियोंको आज्ञा देकर उसे पकड़वा लिया।

यह पत्र महाराज नन्दके पास पहुँचा। वे इसे पढ़कर बड़े क्रुद्ध हुए और प्रधान मंत्री वृद्ध चन्द्रमासको सपरिवार कारागारमें डाल दिया। यह कारागार खास तौरसे राज विद्रोहियोंके लिए जमीनके नीचे बनाया गया था, मध्यान्हके प्रचण्ड सूर्यालोकमें भी वहाँपर घोर अन्धकार बना रहता था। चन्द्र मासके परिवारमें एक सौ आदमी थे। महाराज नन्दने, वृद्ध मंत्रीके इतने बड़े परिवारके भरण पोषणके लिये प्रतिदिन भाण्डारसे एक सेर चावल देनेकी आज्ञा दी।

एक सौ आदमी उस एक सेर चावलको प्रतिदिन खाकर जीवित नहीं रह सकते थे, इसलिये चन्द्रमासने अपने परिजनोंको बुलाकर कहा, "तुममेंसे यदि ऐसा कोई बुद्धिमान् सुचतुर और दृढ प्रतिज्ञ हो, जो अपने बुद्धि—बलसे व्यभिचारी क्षत्रिय नन्द और उसके वंशको समूल विध्वंस करके, फिर क्षत्रिय धर्म और प्रकृत क्षत्रिय राज्य स्थापित कर सके वही इस एक सेर चावलको खाकर प्राणोंकी रक्षा करे। और सब अनाहार रहकर प्राण—त्याग करें।"

तब परिवार-भरके सब मनुष्योंने एक स्वरसे उनसे कहा कि, "आपके अतिरिक्त इस परिवारमें और कोई ऐसा बुद्धिमान् नहीं है, जो इस उच्छृङ्खल क्षत्रिय नन्दवंशको विध्वंस करके, फिर क्षत्रिय धर्म और 'राम राज्य" स्थापित कर सके। आप ही इस कार्यके उपयुक्त हैं। अतः आप ही इस एक सेर चावलसे किसी तरह अपना बसर कीजिए, और नन्द वंशके नाश करनेका मार्ग— सुगम कीजिए।" इस निश्चयके अनुसार वृद्ध चन्द्रमास उस चावलके द्वारा अपनी प्राण रक्षा करने लगे और उनके परिजन अनाहार रहकर नन्द वंशके ध्वंसकी कामना करने लगे। रूस जापानके युद्धमें 'पोर्ट आर्थर' को जय करनेके लिए जापा नियोंने जैसे अम्लान वदनसे अपना जीवन विसर्जन किया था, वैसे ही उस प्राचीन समयमें मन्त्रीके परिजनोंने आहार छोड़कर नन्द वंशके ध्वंसकी आशासे आत्म-बलिदान कर डाला था।

इधर महाराज नन्द, चन्द्रमासके रिक्त स्थानमें द्वितीय मन्त्री राक्षसको अपना प्रधान मन्त्री बनाकर राज काज सम्पादन करने लगे।

एक दिन महाराज महापद्मनन्द, स्त्री पुत्र सहित वाटिकामें टहल रहे थे। टहलते हुए उन्होंने देखा, कि एक वटवृक्षके पत्ते पर, एक वट फल पड़ा हुआ है, और कुछ चींटियां दल बांधकर उस पत्तेको दूसरी जगह लिए जा रही हैं। यह देखकर राजा हँस पड़े। राजाको हँसते देखकर प्रफुल्ल मुखी मुरा भी अपनी हँसीको न रोक सकीं। राजाने मुराको हँसते देखकर पूछा,

मुरा ! तुम क्यों हँस रही हो ? मुराकी हसी निरर्थक थी। वे राजाको हँसते देखकर हँसने लगी थीं। इसलिये वे राजाको अपनी हँसीका कुछ भी मतलब न बतला सकीं। राजाने क्रुद्ध होकर कहा,—"मुरा, अगर तुम अपनी हँसीका मतलब सात दिनके अन्दर न बतला सकोगी तो, तुम्हारे वशमें 'पिण्ड-दान करनेके लिए भी कोई जीता न रहने पावेगा।" क्रुद्ध राजा यह कहकर अन्यत्र चले गये। मुराको और कुछ कहनेका अवकाश न मिला। वे हत-बुद्धि होकर वहीं खडी रह गई।

दिनपर दिन बीतने लगे। लेकिन मुरा बहुत सोच विचार कर भी अपनी हँसीका मतलब न सोच सकीं।

इसके बाद अकस्मात् उनके हृदयमें यह विचार उत्पन्न हुआ कि, वृद्ध प्रधान मन्त्री चन्द्रमासकी तरह बुद्धिमान मनुष्य मगध-राज्यमें दूसरा नहीं है। उनसे यदि सब 'आप बीती' कही जाय तो, सम्भव है, वे हँसीका कुछ अर्थ बतला सकें। उनके मनमें दृढ विश्वास था कि, उनसे पूछनेपर अवश्य कुछ न कुछ मतलब निकलेगा। अतएव मुराने महाराज नन्दसे एक दिन प्रार्थना की कि, वृद्ध मन्त्रीको आज मैं अपने हाथसे चावल दूँगी। महाराजने स्वीकार कर लिया। मुरा चावल देनेके बहाने कारागारमें वृद्ध मन्त्रीके पास उपस्थित हुई। उस समय मन्त्री चन्द्रमास इस चिन्तामें मग्न थे कि, किस प्रकार भ्रष्ट क्षत्रिय वश समूल ध्वस हो, और किस तरह धर्म राज्यकी स्थापना की जाय।

जब वे इसी तरहकी आकाश पातालकी चिन्तामें डूब रहे थे, तब मुरा वहाँ पहुँची। लेकिन ध्यान मग्न योगीकी भाँति चन्द्रभास उनकी उपस्थितिको नहीं जान सके। मुराने पूछा,—"मन्त्रीजी, क्या सोच रहे हैं?" मन्त्रीजीने अन्य मनस्क भावसे कहा—"कुछ भी नहीं।" इस बातके कहनेके बाद ही मन्त्रीजीका अप्रफुल्ल और मलिन मुख मण्डल मानो किसी प्रफुल्लताकी दीप्तिसे उद्भासित हो उठा। प्रतीत हुआ कि, घोर अमावास्यामें हठात् मानो पूनोका चाद उदय हुआ है। मन्त्रीजीने कहा—"देवि, आप यहाँ कहाँ? आज मेरा 'शुभ दिन' अथवा 'अहोभाग्य है', तभी तो आप मुझे यहाँ देखने आई हैं। चन्द्रगुप्त अच्छी तरह तो हैं? राजा साहब सानन्द तो हैं? प्रजा वर्ग सकुशल तो हैं?"

मुराने कहा, "आपके आशीर्वादसे सभी मंगल है। मन्त्रीजी आज मैं बड़ा विपत्तिमें पड़ी हुई हूँ। इसलिए आपके पास आई हूँ। आशा है, विफल मनोरथ न होना पड़ेगा। मैं अपनी राम कहानी आपको संक्षेपमें सुनाती हूँ, आप ध्यान पूर्वक सुननेकी कृपा कीजिए।

"आज ६ दिन हो गए, मैं राजाके साथ उद्यानमें टहल रही थी, सहसा राजा हँस पड़े। उन्हें हँसते देखकर मैं भी अपनी हँसी न रोक सकी। मुझे हसते देखकर राजाने कहा—"मुरा तुम क्यों हँसती हो?" मैं चुप हो गई। मैं कुछ नहीं जानती थी, इसलिए कुछ उत्तर न दे सकी। सिर्फ, उनको हँसते देखकर

ही हँसी थी। राजाने नाराज होकर कहा,—"मुरा, अगर तुम सात दिनमें अपनी हँसीका ठीक ठीक मतलब न बतला सकोगी तो, तुम्हारे वंशमें 'पिण्डदान' करनेके लिए भी कोई जीवित न बचेगा।" उस घटनाके यादसे मेरे हृदयमें घोर आतंक छाया हुआ है। मैं दिन रात यही सोचा करती हूँ कि हाय मेरा वंश निर्मूल हुआ! मेरा इकलौता बेटा चन्द्रगुप्त जिसको छोड़कर मैं एक मिनिट जीवित नहीं रह सकती, जो वंशकी रक्षा करेगा, जो मुझे प्राणोंसे भी प्रिय है, उसीको आज मैं खोने बैठी हूं। मैं आपकी शरणमें आई हूं। मन्त्रीजी, किसी तरह मेरे चन्द्रगुप्तको बचाइये।"

इधर मन्त्रीजीने भी अपनी कार्य सिद्धिका मार्ग परिष्कार देखा। इसीलिए उन्होंने अपनी हसीको मनमें ही छिपा लिया। और बाहर दुःखका भाव दिखला कर कहा,—"रानी, डर क्या है? मैं इसका ठीक ठीक अर्थ बतला दूंगा। अच्छा, आप और राजा साहब जब टहल रहे थे, तब राजा क्या देखकर हँसे थे?"

मुराने वही चींटियों द्वारा वट-पत्तेके खींचनेकी बात कही। मन्त्रीने कहा, "राजाको हसीका तात्पर्य्य यह है, इस वट पत्ते पर जो फल पड़ा हुआ है, वह समय आनेपर एक महा-महीरुहके आकारमें परिणत हो सकता है। ऐसे अद्भुत गुण सम्पन्न फलको क्षुद्र शक्तिवाली चींटिया अनायास खींचे लिये जा रही हैं। समयका कैसा आश्चर्यजनक परिवर्त्तन है!"

मुरा यह सुनकर अवाक् हो गई। घटनाको आपोंसे देखकर भी वे इसका गूढ़ अर्थ उपलब्ध न कर सकी थीं। अब मंत्रीके मुँहसे यह बात सुनकर आनन्दसे अधीर हो गई। मौर्य-वंशकी रक्षा हुई। यह समझ कर मन्त्रीको वे कोटि कोटि धन्यवाद देने लगीं, और उनकी मङ्गल कामना करने लगी। मन्त्रीजीने अवसर देखकर उनसे कहा—"रानी, मैंने तुम्हारे चन्द्रगुप्तकी रक्षा की है, तुम भी मेरी रक्षा करो। मैं अपनी रक्षाका उपाय तुमको बतलाये देता हूँ। जब तुम्हारे उत्तरसे प्रसन्न होकर राजा तुम्हें वरदान देना चाहेंगे, तब तुम उनसे यह वर माँगना कि, वृद्ध मंत्री कैदी की हालतमें अकेले हैं, उनका सारा परिवार अनाहारसे ध्वंस हो गया है। आपका मतलब पूरा हो चुका है। मन्त्रीका जब मन्त्रित्व ही चला गया तो, उसके पास रहा क्या? उनकी हालत तो उस साँप किसी हो गई, है जिसका जहरीला दाँत उखाड़ लिया गया है। अत अब आप वृद्ध मन्त्रीको कारा-मुक्त करके अपनी कुल-मर्यादाकी रक्षा कीजिए।" मुरा मन्त्रीकी इस बातको सुनकर और उनके प्रति आदर प्रकट करके चली गई।

क्रमश उत्तर देनेका समय आ पहुँचा। इधर महाराज महापद्मनन्दने अपनी सन्तान महानन्दको राजत्व देकर और चन्द्रगुप्तको सेनापति-पदपर अभिषिक्त करके वानप्रस्थ लेनेका सङ्कल्प किया।

प्रफुल्ल मुखी मुरा सातवें दिन प्रात काल महाराजके निकट

जा पहुंचीं। राजाने पूछा—"मुरा, आज बड़े सवेरे आ गई।"

मुराने कहा, महाराज आज मेरे उत्तर देनेका दिन है।" राजाने कहा—"अच्छा, बतलाओ तो तुम उस दिन क्यों हँसी थी?" मुराने मन्त्रीके उपदेशके अनुसार उत्तर प्रदान किया। राजाने अत्यन्त आह्लादित होकर मुराको वर देनेकी इच्छा प्रकट की। मुराने इस सुयोगमें मन्त्री-कथित वरकी प्रार्थना की। राजाने सोचा कि, वृद्ध मन्त्रीके परिवारमें अब कोई नहीं रह गया है। वे स्वयं भी अशक्त हैं। अतएव उनके छोड़ देनेमें अब कोई हर्ज नहीं है। इसलिए उन्होंने मुराकी प्रार्थनाको सहर्ष स्वीकार कर लिया।

+ + +

चन्द्रभास मुक्त हो गये। उनकी उस समयकी प्रसन्नताकी सीमा न थी। मुद्दतों बाद यह सुयोग प्राप्त हुआ था। सूर्यके प्रकाश, वायुके उच्छ्वास, और मुक्त आकाशमें उन्हें नवीनता प्रतीत होती थी। मानो उन्हें स्वर्गका आधिपत्य ही मिल गया हो। सचमुच मुक्ति ऐसी ही वस्तु है। विद्वानोंकी रायमें मुक्ति ही जीवन है और बन्धन ही मृत्यु। जो मुक्त नहीं है, उसकी गणना यदि मृतोंमें नहीं तो 'जीवन्मृतों' में अवश्य करनी चाहिये। मनुष्यको अधिकसे अधिक मूल्य देकर मुक्ति खरीदना चाहिए। इसी मुक्ति जैसी अद्भुत वस्तुको पाकर ही वृद्ध चन्द्रभास—मन्त्रित्व हीन चन्द्रभास, परिवार हीन चन्द्र-

भास, उपेक्षित, दलित और जराजीर्ण चन्द्रभास—नवीन जीवनसे दृप्त हो गये थे। आज उनकी इच्छाकी वज्राग्निमें समस्त भूमण्डलको भस्मसात् कर देनेकी शक्ति थी। आकाश पाताल और नीचे ऊपर वे सभी जगह बाधा बन्ध विहीन अतएव मुक्त थे। फिर वे क्यों आनन्दित न होते? यहींसे उनके जीवनका प्रवाह बदल गया।

नन्द वंशको ध्वंस करके प्रकृत क्षत्रिय-भावको मगध-साम्राज्यमें स्थापित करनेके लिये वे अथक परिश्रम करने लगे। उन्हें मालूम होता था कि, सम्भवतः मेरा यौवन-काल फिर लौट आया है। उनके हृदयमें ठीक ठीक प्रति हिंसावृत्ति जाग्रत नहीं हुई थी। किन्तु सत्य प्रतिज्ञा करनेके लिये वे इस ढगसे कार्यकी ओर अग्रसर हो रहे थे। उनके हृदयमें अटल विश्वास था कि, नन्द-वंशके ध्वंसके साथ ही साथ प्रकृत क्षत्रिय-धर्मकी प्रतिष्ठा होगी।

+ + +

बुढापेमें महाराज महापद्मनन्दने, 'नव नन्दों' पर राज्य भार रखकर और चन्द्रगुप्तको सेनापतिके पदपर अभिषिक्त करके वान प्रस्थका अवलम्बन किया। यद्यपि चन्द्रगुप्त सेनापति हुए, लेकिन वे नव नन्दोंके चक्षु शूल हो रहे थे। नव नन्द उन्हें फूटी आँखोंसे भी देखना पसन्द नहीं करते थे। उन लोगोंकी अपेक्षा चन्द्रगुप्त विद्या बुद्धि और शक्तिमें बढे चढे थे। एक दिन किसी बहानेसे 'नव-नन्दों' ने चन्द्रगुप्तको एक कारागारमें बन्दकर रक्खा। कारागार जमीनके नीचे था।

वहाँ भीषण अन्धकार बना रहता था। हवाके जानेकी भी गुञ्जायश न थी। रोशनी वहाँपर थी ही नहीं, यह कहना निष्प्रयोजन है। चन्द्रगुप्त कुछ दिनों तक उसी कारागारमें असह्य यन्त्रणा-भोग करते रहे, और उससे मुक्त होनेके उपायकी उद्भावना करते रहे।

\+ \+ \+

एक बार सिंहलके राजाने एक मोमके सिंहको पींजडेमें आबद्ध करके नन्द राजोंकी बुद्धिकी परीक्षाके लिये मगधको भेजा, और दूतके द्वारा कहला दिया कि, मगध साम्राज्यमें कोई ऐसा चतुर पुरुष है या नहीं, जो पींजडेको खिडकी न खोलकर अथवा पाजडेको न तोडकर सिंह बाहर निकाल सके?

नन्द-राजा गण तो इस कठिन समस्यासे बिल्कुल हत-बुद्धि हो गये। कोई कुछ स्थिर न कर पाता था। प्रधान मन्त्री राक्षस भी वहांपर उपस्थित थे। उन्होंने कहा—"तुमलोग इतने उतावले क्यों हो रहे हो? दूतके द्वारा सिंहल-नरेशने तुमलोगोंके पास जो शेर भेजा है, उसे पींजडेसे बाहर निकालनेके उपयुक्त तुमलोगोंमेंसे ही एक व्यक्ति है, उनका नाम है—चन्द्रगुप्त। तुमलोगोंने उन्हें बेकसूर जेलमें डाल रक्खा है। वही चन्द्रगुप्त तुम्हारे एक मात्र सहाय हैं। उन्हींके अभावसे तुम्हारा यह स्वर्ण राज्य, श्मशान हो रहा है। इसीलिए कहता हूं कि, उनको तुमलोग सम्मान पूर्वक कारागारसे मुक्त कर लाओ। उनके आनेपर सिंहल नरेश प्रेरित सिंह सम्बन्धी समस्या बहुत जल्द हल हो जायगी।" प्रधान मन्त्री राक्षसके परामर्शके अनुसार वे लोग

चन्द्रगुप्तको आदर-पूर्वक जेलसे बाहर ले आये। उनलोगोंने चन्द्रगुप्तसे बहुत विनीत-भावसे कहा कि, भाई, हमलोगोंने अनजानमें तुम्हारे साथ जो असद् व्यवहार किया है, तुम्हें जो असीम यन्त्रणा दी है, उसके लिए क्षमा करो। और देखो, हमलोगोंके सम्मुख भयकर विपद् उपस्थित है। सिंहल नरेशने एक ऐसा सिंह भेजा है, जिसे, पींजड़ेकी खिड़की न खोलकर अथवा पींजड़ेको बिना तोड़े बाहर निकालना होगा। यदि हमलोग इस कार्यको न कर सकेंगे, तो हमारा गौरव नष्ट हो जायगा। इस वक्त भेद भाव छोड़कर, जिससे इस विपत्तिसे उद्धार पा सकें, वही चेष्टा करो।" चन्द्र गुप्तने प्रसन्न-वदन होकर और अपने मनका भाव छिपाकर कहा—"आओ भाइयो, जहाँ सिंह है, वहाँ चलें।'

सब लोग तुरन्त वहाँ पहुँच गये, जहाँ 'पींजड़ेमें शेर' बन्द था। मेधावी चन्द्रगुप्तने पींजड़ेके अन्दरके शेरकी परीक्षा करके समझ लिया कि, यह शेर मोमका है। बस उन्होंने एक लौह शलाकाको गर्म करके, उससे पींजड़ेके शेरको गलाकर बाहर कर लिया। उनके इस अद्भुत कार्य-कौशलको देखकर उपस्थित जनता विस्मित होकर उनकी प्रशंसा करने लगी।

\+ \+ \+

यद्यपि चन्द्रगुप्त मुक्त हो गए, लेकिन उनपर जो घोर अत्याचार किया गया था, वह वे न भूल सके। वे अत्याचारका प्रतिशोध लेनेके लिये तैयार होने लगे। उन्होंने कारागारसे मुक्त होकर प्रजाके साथ ऐसा सद् व्यवहार करना प्रारम्भ किया, कि

प्रजा वर्ग देवताकी तरह भक्ति और श्रद्धासे उनका सम्मान करने लगी। उनमें शौर्य, वीर्य, गाम्भीर्य, विनय और बुद्धि आदि राजोचित लक्षण वर्त्तमान थे। जिन गुणोंसे युक्त होनेके कारण महाराज युधिष्ठिर आदि राजोंने अपने २ राज्योंका सुचारु-रूपसे शासन किया था। वे सब गुण चन्द्रगुप्तमें वर्त्तमान थे। मगधका प्रजा वर्ग डरता था नन्द-राजोंको, लेकिन श्रद्धा करता था, चन्द्रगुप्तको। यह देखकर नवो, नन्द ईर्षा करके फिर उनके प्राण-नाश करनेका षड्यन्त्र करने लगे। चन्द्रगुप्तको यह खबर किसी तरह मिल गई। वे प्रसिद्ध दिग्विजयी सिकन्दर शाहके आश्रय प्रार्थी होकर पञ्जाब भाग गये।





नन्द-वंश-नाशकी प्रतिज्ञा।



विवाहके बन्द हो जानेके कुछ दिन बाद एक दिन चाणक्य एक मैदान पार करके कहीं जा रहे थे। सहसा उनकी दृष्टि कुशोंपर जा पड़ी। कुशोंके देखनेसे उनकी पूर्व-स्मृति जाग्रत हुई। वे मन ही मन सोचने लगे, इन कुशोंने मेरे ब्याहमें रोड़े अटका कर मेरा यश नाश किया है, आज मैं भी इनको निर्वंश कर दूँगा। यह सोचकर वे कुशोंको उखाड़ने लगे, और उखाड़नेके बाद उनकी जड़ोंमें शहद छोड़ने लगे। ठीक इसी समय नन्द-वंशके भूत पूर्व प्रधान मन्त्री, वृद्ध चन्द्रमास उस मैदानमें आ पहुँचे। उन्होंने देखा कि, मैदानमें एक लर्वाकृति, कोटरगत-चक्षु और काली स्याहीको भी मात करनेवाले रंगका, एक नवयुवक ब्राह्मण कुशोंको उखाड़कर उनकी जड़ोंमें शहद छोड़ रहा है। पूछनेपर उन्हें मालूम हुआ कि इसका नाम है चाणक्य। चन्द्रमासने, उससे पूछा, "युवक, तुम कुशोंको क्यों उखाड़ रहे हो?" युवकने उत्तर दिया कि, 'मैंने बड़े कष्टसे अपने ब्याहके



नन्दवंशका नाशक।

(देखिये—पृष्ठ संख्या २१

लिए पात्री ठीक की थी, और अपने बन्धु बान्धवोंके साथ ब्याह करने जा रहा था, रास्तेमें ये कुश मेरे पैरमें गड गए, पैरोंसे खून निकलने लगा, शादी न हो सकी, और मेरी वंश-रक्षामें विघ्न पड गया। अतएव मैं इसका प्रतिशोध लूँगा। इस कुश वंशको जडसे नष्ट कर दूँगा।"

चन्द्रभासने देखा कि, प्रतिहिंसापरायण, तीक्ष्ण-बुद्धि, ब्राह्मण किस अटूट-संकल्पको लेकर असाध्य साधनमें प्रवृत्त हुआ है। कुशोंकी जडोंमें शहद छोडनेका अर्थ यह था कि, मिठासके लोभसे चिटियां आकर जडोंको नष्ट कर देंगी। यह काम विशिष्ट बुद्धिमत्ताका परिचायक था, इसमें कोई सन्देह नहीं। चन्द्रभासने इस ब्राह्मण-युवकको अपने उद्देश्यके साधनके निमित्त सहकारी पानेकी इच्छासे उससे कहा कि, "ब्राह्मण, मैं राज मन्त्री चन्द्रभास हूँ। तुम व्याकुल मत हो। मैं कुश वंशके समूल उन्मूलनमें तुम्हारी मदद करूंगा, तुम मेरे साथ आओ।" चाणक्यने चन्द्रभासका अनुसरण किया। चन्द्रभासकी विद्या और बुद्धिके सम्बन्धमें पहले ही लिखा जा चुका है। उन्होंने चाणक्यको अनेक प्रकारकी शिक्षायें देना प्रारम्भ किया। तीव्र-बुद्धि चाणक्यने थोडे ही परिश्रमसे उन सबको स्वायत्त कर लिया इस प्रकार थोडे ही दिनोंमें वे महापण्डित हो गये।

चाणक्यने पढनेकी अवस्थामें ही प्रभूत बुद्धि-मत्ताका परिचय दिया था। उनके कार्य-कलापमें, उनकी असाधारण बुद्धि शक्ति, दृढ अध्यवसाय, और गभीर विवेचना परिस्फुट होती थी। एक दिन

एक वृद्धाको एक पेंडी देखकर यह जाननेका बड़ा कौतूहल हुआ कि इसका कौन अंश ऊपरका है, और कौन नीचेका, बहुत सोचनेके बाद भी वह यह न जान सकी। कितनों ही के पास वह अपनी समस्याका समाधान करानेके लिये उपस्थित हुई, लेकिन कोई भी उसका औत्सुक्य निवारण न कर सका, यहाँ तक कि राजा भी असमर्थ हो रहे। सुविज्ञ राक्षससे पूछने पर, भी इसका कुछ जवाब न मिला। इसके बाद वृद्धाने सोचा कि, अभीतक मैं पण्डित चन्द्रभासके घर नहीं गई, अवश्य ही वे इस तत्वका निरूपण कर सकेंगे। बस, वृद्धा चन्द्रभासके घरकी ओर चल पड़ी।

चन्द्रभासके पुस्तकालयके बैठे हुए चाणक्य कोई पुस्तक पढ़ रहे थे, इसी समय वृद्धाने वहाँ उपस्थित होकर अपना मतलब कह सुनाया। चाणक्यने एक क्षण भर भी न सोचा, और उस काठको लेकर पानीमें फेंक दिया। उसका जो अंश वजनदार था, वह नीचे हो गया, और जो अंश अपेक्षाकृत हल्का था, वह ऊपर रह गया। तब चाणक्यने कहा कि जो अंश जलमें नीचेकी ओर है, वह जड़की ओरका है। और जो ऊपर उतरा रहा है, वही ऊपरकी ओरका है।

जिस प्रश्नका उत्तर किसीने नहीं दिया। अनेक पंडित बहुत सोच विचार करके भी जिसकी मीमांसा न कर सके थे। राजा अकृत कार्य हो गये थे। क्षण भरमें—सोचनेका अवकाश भी न लेकर उसे बतला दिया, किसने? दरिद्र, अज्ञात और कदाकार

चाणक्यने। उस समय वे एक नवीन विद्यार्थी मात्र थे। भविष्यमें जिसको उंगलीके इशारेसे एक विशाल साम्राज्यका संचालन हुआ था, जिनके असीम बुद्धि-बलसे एक राज वंश क्षणभरमें ध्वंस हो गया था। जिनकी अग्नि दृष्टिसे अत्याचारी का सोनेका राज मुकुट जलकर भस्मसात हो गया, जिनकी टेढ़ी—भौंहको देखकर लाखों मनुष्य शंकित हो उठते थे, उनकी अलौकिकताका विकाश छोटे ही समयसे हुआ था।

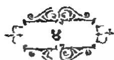
उनकी विलक्षणताको देखकर चान्द्रभासने सोचा कि, यही नन्द वंशके ध्वंस करने योग्य व्यक्ति हैं। वे इस ध्वंस-यज्ञके आयोजन करनेमें प्रवृत्त हुए। नन्दराज महानन्दके साथ उन्होंने विशेष प्रतिष्ठता बढ़ाना आरम्भ किया। महाराजने, चान्द्रभासकी आत्मीयतासे एक बार महाराजने, मुग्ध हो गए कहा,—"मन्त्रीजी, पितृ श्राद्धकी तिथि आ गई है, मेरी इच्छा है कि, एक सुयोग्य ब्राह्मण द्वारा यह श्राद्ध कार्य सम्पन्न कराया जाय। चान्द्रभासने कहा, "महाराज, इसके लिए क्या चिन्ता है? मेरे यहाँ सुयोग्य ब्राह्मण है, उसके द्वारा आपके पितृ-देवका श्राद्धकार्य सुचारुरूपसे सम्पन्न कराऊँगा।" यह कहकर चान्द्रभासने अपने मनमें सोचा कि, अगर अपमानका प्रतिशोध लेना है, तो यह कार्य चाणक्यके द्वारा ही सम्पन्न हो सकेगा। इसीलिए घर लौटकर उन्होंने बड़े आग्रहके साथ चाणक्यसे कहा कि, "आगामी अमावस्याको महाराज महानन्दके यहाँ पितृ श्राद्ध है उनकी आज्ञासे तुम्हें प्रधान

३२५

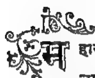
पुरोहितके आसनपर अभिषिक्त करता हूँ। तुम उस दिन जाकर श्राद्ध-कार्य करा देना।"

निर्दिष्ट समयपर पंडित चाणक्य पाटलि पुत्रके राज गृहमें उपस्थित हुए। चन्द्रगुप्तने उनको प्रधान पुरोहितके आसनपर बैठा दिया। महाराज नन्दने आकर देखा कि, प्रधान पुरोहितके आसनपर एक कदाकार ब्राह्मण बैठा हुआ है। वे क्रोधसे उन्मत्त हो गये। उन्होंने व्यंगके स्वरसे कहा कि, "उतर आओ, ब्राह्मण, उतर आओ, यह आसन तुम्हारे लिए नहीं है।" लेकिन चाणक्य ऐसे असाधारण ब्राह्मण थे, कि उन्होंने राजाकी 'लाल आँखें' देखकर भ्रूक्षेप भी नहीं किया। वे आसनपर—अटल, अचल होकर बैठे रहे। अन्तमें महाराज महानन्दकी आज्ञासे उनकी शिखा पकड़कर, और अपमान पूर्वक उनको राज-प्रसादके बाहर कर दिया गया।

अपमान, घृणा, क्रोध और क्षोभसे उनका सर्वाङ्ग जल उठा। आँखोंसे अग्नि स्फुलिंग बाहर होने लगे। उन्होंने दृढ़ स्वरसे कहा "क्षत्रियोंकी इतनी स्पर्द्धा! ब्राह्मणके प्रति इतना अनादर! अच्छा, देख लेना महाराज, अभी ब्राह्मणकी अन्तर्निहित, तेजोमय शक्ति लुप्त नहीं हुई। अभी विश्व-ब्रह्माण्डके जलानेकी क्षमता उसमें है। ब्राह्मण, क्षत्रियके पास अपमानित होने नहीं आया है। आज यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि, जबतक इस नंद वंशको ध्वंस करके प्रकृत क्षत्रियको इस सिंहासनपर न बैठा सकूँगा, तबतक यह शिखा बन्धन इस मुक्त शिखाका नहीं करूँगा।" यह कहकर चाणक्य पाटलिपुत्रसे द्रुत-गतिसे चले गये।



चन्द्रगुप्त और चाणक्य



हाराज महानन्दके डरसे चन्द्रगुप्त गुप्तरूपसे पंजाबमें जगद्विजयी सिकन्दरशाह जहांपर ठहरे हुए थे—उस स्थानपर रहने लगे। बुद्धिमान् चन्द्रगुप्त सिकन्दरशाहके कार्य-कलाप गुप्तरूपसे देखने लगे। उन्होंने सोचा कि, सिकन्दरका युद्ध कौशल, व्यूह रचना और अस्त्र परिचालन इतना सुन्दर है कि यदि मैं उसे ठीक ठीक आयत्त कर सकू, तो अनायास मगध साम्राज्यका एकच्छत्र राजा हो सकता हूँ। उन्होंने देखा कि, सिकन्दरके प्रधान सेनापति सेल्यूकस अस्त्र विद्यामें विशेष पण्डित और बुद्धिमान् हैं। इसके साथ साथ उनका स्वभाव भी बड़ा ही कोमल है। चन्द्रगुप्त अब यह सोचने लगे—कि किस तरह मैं उनके साथ मित्रता स्थापित कर सकता हूँ? एक दिन उन्होंने देखा कि सेनापति सेल्यूकस अपने शिविरमें अपनी परम सुन्दरी षोडशी कन्याके साथ बैठे हुए हैं।

चन्द्रगुप्तने इसे उद्देश सिद्धिके लिये स्वर्ण सुयोग समझा।

वे तत्काल साहस करके सेल्यूकसके पास शिविरमें उपस्थित हुए। सेल्यूकस उस वक्त किसी चिन्तासे अन्यमनस्क हो रहे थे। सहसा अपने सम्मुख एक अपरिचित और परम सुन्दर विदेशी युवकको उपस्थित देख, और विस्मित होकर पूछा, "तुम कौन हो? और मुझसे क्या चाहते हो?" चन्द्रगुप्तने सेल्यूकसकी भाषा समझ ली। कारण वे इधर बहुत दिनोंसे ग्रीक वाहिनीकी व्यूह रचना और रण कौशलका पर्यवेक्षण कर रहे थे। इसी सुयोगमें उन्होंने बहुत ही गुप्तरूपसे किसी सैनिककी सहायतासे ग्रीक भाषा पढ़ ली थी। उन्होंने उत्तर दिया कि, मैं मगध साम्राज्यके अधीश्वर महापद्मनन्दका लड़का चन्द्रगुप्त हूं। मेरे सौतेले भाई मुझसे बड़ी ईर्षा करते हैं। इसलिए उन लोगोंने सिंहासनपर अधिकार करके मुझे निर्वासित कर दिया है। मैं उस अन्यायके प्रतिशोध लेनेकी प्रतिज्ञा करके वहाँसे बाहर आया हूं। अगर आप अनुग्रह करके मुझे युद्ध कौशलकी शिक्षा दें, मैं तो अपने भाइयोंके अन्याचारका प्रतिशोध ले सकूँगा और उन लोगोंको सिंहासन-च्युत करके अपने हृत राज्यका उद्धार कर सकूँगा।"

सेल्यूकस उनकी वाक्पटुता और महत्त्वाकांक्षा देखकर मुग्ध हो गए, और युद्ध विद्याकी शिक्षा देनेके प्रस्तावको मंजूर कर लिया। चन्द्रगुप्त, जैसे विनयी, वैसे ही बुद्धिमान् थे। सेल्यूकस क्रमशः उनका कार्य कलाप बुद्धि विद्या, शौर्य-वीर्य और अन्याय गुणावली देखकर बहुत सन्तुष्ट हुए। सेल्यूकसकी कन्या भी

चाणक्य



चन्द्रगुप्त और सेल्यूकस ।

चन्द्रगुप्तके प्रति मुग्ध और आकृष्ट हो रही थीं। धीरे धीरे दोनोंमें प्रगाढ़ प्रीति उत्पन्न हो गई।

सेल्यूकस यह बात न जानते हों, सो नहीं। वे जान बूझकर भी अनजान बने रहे। कारण, चन्द्रगुप्तपर प्रतिदिन उनका स्नेह बढ़ता ही जाता था। चन्द्रगुप्त, सेल्यूकसके आश्रममें रहकर गुप्तरूपसे युद्ध कौशल सीखकर रण-निपुण हो गये। लेकिन इस बातको सिकन्दर अथवा दूसरा कोई नहीं जान सका।

कुछ दिनोंके बाद ग्रीक सैन्यके हीराट जानेका समय आ पहुँचा। सेल्यूकसने चन्द्रगुप्तसे कहा, "तुम अब सम्पूर्णसमर-कौशल सीख चुके हो, रणनीति विशारद हो गये हो, अब अपने हतराज्यके उद्धार करनेकी चेष्टा कर सकते हो। कल हम लोग हीराट चले जायँगे। मैं तुमपर अपने पुत्रकी तरह स्नेह करता हूँ, युद्ध विद्याके सम्बन्धमें मैं जो कुछ जानता था उसे तुम्हें निष्कपट भावसे बतला दिया। अब तुम अपने कार्योद्धारकी चेष्टा कर सकते हो।"

यह खबर किसी तरह अलेकजेंडरने भी सुनी कि, चन्द्रगुप्त युद्ध विद्यामें निपुण हो गये हैं उनकी बात चीत और काम काजसे, उनके वीरत्व, साहस और तीक्ष्ण बुद्धि आदि गुण देखकर वे चन्द्रगुप्तके प्रति सन्तुष्ट और आकृष्ट हुए। और उन्हें राज्योद्धार करनेके लिए उत्साहित भी किया। दूसरे दिन ग्रीक सैन्य और सेल्यूकस वगैरह हीराट चले गये।

चन्द्रगुप्त उत्साहके वेगसे अधीर हो रहे थे। किस ढगसे

अपना राज्योद्धार करेंगे, यही उनकी चिन्ताका एक मात्र विषय था। हठात् उनके मनमें 'पर्वतक' की याद याद हो आई। वे म्लेच्छ देशीय राजा पर्वतकके पास जा पहुंचे। मलय देशके राजा पर्वतकके पुत्र मलय केतुसे चन्द्रगुप्तने मुलाकात की। पहली भेटमें ही मलय केतुके साथ उनकी घनिष्ट मित्रता हो गई।

मलय केतुने कहा कि, "युवराज, मेरे रहते आपको किस बातकी चिन्ता है? इस घरको तो आप अपना घर ही समझिए। मैं प्राण पणसे आपकी सहायता करूँगा। मेरी पहाडी फौज आपके लिए युद्धमें प्राण विसर्जन करनेमें कुण्ठित न होगी। आप मेरे मित्र हैं। मैं आपकी यथासाध्य सहायता करूँगा।"

चन्द्रगुप्तने कहा कि, मैं आपकी फौजको ग्रीक् सामरिक रीति सिखलाऊँगा। और उसको एक अजेय, वाहिनीके रूपमें सङ्गठित करूँगा।" मलय केतु, महानन्दके प्रधान मन्त्री राक्षससे परिचित थे। बोले "महाराज महानन्दके मन्त्री राक्षस बहुत बुद्धिमान् और कर्मपटु है।"

चन्द्रगुप्त चन्द्रभासके ज्ञान और बुद्धिकी बातोंको जानते थे। अतएव उन्होंने भी कहा,—"मैं भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, चन्द्रभाससे मदद मागूंगा। सुना है वे बडे बुद्धिमान हैं। और उन्होंने मूर्ख चाणक्यको भी महा पण्डित बना दिया है।"

\+ + +

चन्द्रगुप्तने पण्डित चाणक्यको खोजनेके लिए वृद्ध मन्त्री चंद्रभासको भेजा। चन्द्रभास चाणक्यके घर गये, और बोले कि

"चन्द्रगुप्त ग्रीक् सेनापति सेल्यूकससे, युद्ध विद्या सीखकर आ गया है। उसके द्वारा तुम्हारे कार्यकी सिद्धि होगी। अत अब तुम क्षण-मात्रकी देरी न करके मेरे साथ आओ।"

चाणक्यका मलिन-मुख प्रदीप्त हो उठा। दोनों आंखे प्रज्वलित हो गई। ध्वंस-यज्ञके प्रज्वलित करनेके लिए ईंधन पाकर आज वे आनन्दित हैं, यज्ञमें पूर्णाहुति देनेका सुयोग उपस्थित हुआ समझ कर ही उनकी आँखोंमें आज इतनी दीप्ति है।

चाणक्य, चन्द्रगुप्तके पास उपस्थित हुए। चन्द्रगुप्त चाणक्यकी कुत्सित मूर्त्ति देखकर, हत बुद्धि हो गये, उनके मुखसे वाक् स्फुरण नहीं हुआ। स्वप्न हतकी तरह निस्तब्ध—नीरव खड़े रहे। बन्धन मुक्त दीर्घ शिखा, कृष्ण वर्ण देह, भीषण थी। मुख मण्डलमें प्रात कालीन बाल-रविकी तरह एक दीप्ति जल उठी, और क्षण-भरमें ही फिर अन्धकारमें विलीन हो गई। - मानों श्याम-घनपर बिजली चमक उठी और फिर उसीमे मिल गई। शीर्ण देह एक बार कम्पित हुई, लेकिन वह भी सिर्फ क्षण भरके लिए, और फिर ज्योंकी त्यों स्थिर हो गई। चाणक्य अग्रसर हुए, उनके ललाटमें गम्भीर रेखाये थीं और आखोंमें अग्नि ज्वाला, मुख मण्डलमें शङ्काहीन, कूट-बुद्धिका अद्भुत हास्य! चन्द्रगुप्तने उनको प्रणाम किया।

\+ + + +

चाणक्यने चन्द्रगुप्तसे अपने आह्वानका कारण पूछा। चन्द्रगुप्तने सम्पूर्ण विवरण बतला दिया। चाणक्यने चन्द्रगुप्तको

एकबार सिरसे पैर तक देखा, और फिर पूछा, "मेरी आज्ञानुसार काम कर सकोगे ?" अगर कर सको, तो मैं तुम्हें सिंहासनपर फिर बैठा सकता हूं, इस अत्याचारी राज वंशका अवसान कर सकता हूं। अगर कर सको, तो तैयार हो जाओ। ब्राह्मणके अग्नि-तेजसे अन्यायको भस्म करूँगा। अत्याचारीको दग्ध करूँगा। अत्याचारीकी रक्त-धारासे उसकी पाप कालिमाका प्रक्षालन करूंगा। चाणक्य, बिजलीकी तरह वहाँसे अन्तर्धान हो गए।





युद्धका आयोजन



चाणक्य चन्द्रगुप्तको लेकर युद्धका आयोजन करने लगे। उनके सम्मुख उस समय कालकी संहार मूर्त्ति थी, और उस मूर्त्तिसे खेलनेके लिए चाणक्यने चन्द्रगुप्तको आज प्राप्त किया था। चाणक्यने युद्धके लिये और भी कितने ही राजोंसे मित्रता की थी। महाराज महानन्दका कार्य्य कलाप देखनेके लिए, चाणक्यने अनेक गुप्तचर भेज रक्खे थे। चाणक्य मनमें जो बात सोचते थे, उसे मुँहसे कभी प्रकाश नहीं करते थे। उनकी कार्यावली बहुत ही अद्भुत थी, उनके किसी भी कामको कोई समझ नहीं पाता था।

चाणक्यने चन्द्रगुप्तसे कहा, "बेटा, तैयार हो जाओ। नन्द-राजके प्रधान मन्त्री राक्षस हम लोगोंको परास्त करनेके लिए विशेषरूपसे प्रस्तुत हैं। मैं मानता हू कि, वे बड़े बुद्धिमान् हैं। राज-नीतिमें उनका असाधारण ज्ञान है, तो भी हम उन्हें दिखला देंगे कि, हमारी शक्ति कितनी बड़ी है। तुम अपने मित्र मलय

केतुको साथ लेकर म्लेच्छ सेनाको शिक्षा दो और सुशिक्षित सैन्यके द्वारा एक प्रकाड व्यूहकी रचना करो। व्यूह ऐसा होना चाहिए, जिसपर आक्रमण करके शत्रु-सैन्य हमलोगोंका अनिष्ट न कर सके। तुम अपनी व्यूहके इधर उधर तीन कोस तक और भी फौज गुप्तरूपसे रख छोड़ो। और इसके साथ २ चारों ओर खूब चतुर चरोंको भेज दो। शत्रुओंका सम्वाद पाते ही जिससे वह तुरन्त तुम्हारे पास आ जाय, इसका शीघ्र प्रबध करो। जो मनुष्य तुम्हारे पास खबर लेकर आये, उसे बहुत विश्वस्त होना चाहिए।"

चन्द्रगुप्तने कहा, "मैं अनेक स्थानोंपर गुप्तचर भेज चुका हू। वे सभी विश्वास पात्र हैं, और हर एक नाकेपर फौज भेज चुका हू। आपकी आज्ञानुसार काम पहले ही हो चुका हैं। अब मैं, मलय केतु और पर्वतकके निकट जाकर अन्यान्य राजोंके वश करनेकी चेष्टा करे गे।" यह कहकर चन्द्रगुप्त मलय केतुको साथ लेकर चले गये।

+ + +

चाणक्य क्षुधित और रक्त लोलुप शेरकी तरह युद्धकी चिन्ता कर रहे थे। प्रतिहिंसाकी उन्मादनासे उनका चित्त फेनिल हो रहा था। उन्होंने अपने शिष्यको बुलाकर कहा, "बेटा वृद्ध मन्त्री चद्रभास कहाँ हैं? उन्हें ढूँढकर यहाँ ले आओ।" उनके शार्ङ्ग-रव नामक शिष्यने, उनकी आज्ञानुसार वृद्ध चद्रभासको लाकर उपस्थित किया। चद्रभाससे चाणक्यने सम्मान पूर्वक

कहा, "गुरुदेव, अब समय उपस्थित है, खूब सोच-विचार कर काम करना होगा। जिस राक्षसने आपको एक दिन विपद्ग्रस्त किया था, वही अब नंद-वंशका कर्त्ता धर्त्ता है।"

चन्द्रभासने कहा,—"कुछ चिन्ता नहीं है, तुम अकेले ही राक्षसका प्रभाव नष्ट करनेके लिये काफी हो। मैं आशीर्वाद देता हूँ, तुम्हारा-कल्याण हो।" यह कहकर चन्द्रभास वहाँसे चले गये।

चाणक्यने चन्द्रगुप्तको युद्धमें उत्साहित करनेके लिए, उनके पास एक दूत भेजा। उस दूतने चन्द्रगुप्तसे चाणक्यकी सब बातें कह सुनाई। चन्द्रगुप्त, स्वराज्य उद्धारकी आशासे, और नन्द शक्तिको नष्ट करनेके उद्देश्यसे, शक्ति संचय करने लगे। चन्द्रगुप्त कितने ही राजोंसे मिले। उन्होंने उन लोगोंको अपनी ओर मिलाने का यथासाध्य प्रयत्न किया। बादको अपनी सफलताका समाचार चाणक्यके पास भेज दिया और चाणक्यकी आज्ञानुसार युद्धके लिए प्रस्तुत हुए। लेकिन उनकी अधिकांश सेना नूतन थी। इसलिये ग्रीक-पद्धतिके अनुसार चन्द्रगुप्त उस फौजको युद्ध विद्याकी शिक्षा देने लगे। उन दिनों स्वयं पर्वतक भी पुत्रके साथ मिलकर चन्द्रगुप्तकी विशेष-रूपसे मदद करने लगे थे। युद्धकी आसन्न-सम्भावना समझकर चन्द्रगुप्त चाणक्यसे विशेष-भावसे परामर्श करने लगे। उनकी आज्ञानुसार एक जंगलको आबाद करके वहांपर एक दुर्ग निर्माण किया गया। इस तरह युद्धकी प्रतीक्षा करने लगे। इसी समय चाणक्यने, चन्द्रगुप्तके साथ मलयकेतुकी

घनिष्ठता बढ़ानेके लिये यह प्रस्ताव किया, कि मलयकेतुकी बहनकी शादी चन्द्रगुप्तके साथ हो।

मल्याधिपति पर्वतक भी इस बातसे बड़े प्रसन्न हुए, और विशेष रूपसे युद्धका आयोजन करने लगे। युद्धकी तैयारीके समय ही चाणक्य चन्द्रगुप्तको राजपदपर अभिषिक्त करनेके लिए, एक विश्वस्त कर्मचारीके साथ मिलकर अभिषेक कार्य सम्पन्न करनेमें प्रवृत्त हुए।

अभिषेककी सामग्री लेकर चाणक्यके, चन्द्रगुप्तके पास उपस्थित होनेसे कुछ पहले, यह सवाद सुनकर चन्द्रगुप्त कुछ विचलित हुए। बादको चाणक्य जब उनके पास उपस्थित हुए, तब चन्द्रगुप्तने यह प्रतिज्ञा की कि ,नन्द-वंशको ध्वस किये बिना मैं शान्त न होऊँगा। गुरुके अपमानका प्रतिशोध मैं अवश्य लूँगा। पुत्रकी अधीरता देखकर उनकी माँ मुराने अनेक प्रकारसे सान्त्वना दी। खैर। किसी तरह हो, उनकी हृदय-भेदी यन्त्रणाका कुछ उपशम हुआ। और इस कार्यको विधि-निर्दिष्ट समझकर उन्होंने ग्रहण किया।





नन्द-वंशका नाश।

चन्द्रगुप्तने चाणक्यसे स्वधर्म-पालनको इस ढंगसे सीखा था कि, वे हमेशा उसी कार्यमें अविश्रान्त भावसे लगे रहते। लोक-सेवा, और देशकी उन्नति साधनको वे धर्मका प्रधान अंग समझते थे। शरणागतके क्षमा करने योग्य, उपयुक्त औदार्यसे वे वंचित न थे। वे स्त्री जातिकी मातृवत् श्रद्धा करते थे, महिलाओंका अपमान वे किसी तरह न सह सकते थे। अपने जीवनकी पर्वाह न कर वे स्त्रियोंकी सम्मान रक्षाके लिए सदा प्रस्तुत रहते थे।

\+ \+ \+

चन्द्रगुप्तका नन्द-राजोंके साथ युद्ध प्रारम्भ हो गया। लगभग एक मास तक घोर युद्ध करनेके बाद क्रमश नन्द राजकी सेना समाप्त प्राय हो गई। चन्द्रगुप्त स्वभावत बड़े ही मृदुल स्वभाव के थे। नन्द-राजकी पराजय होते देखकर उनका हृदय करुणा-पूर्ण हो गया। नन्द राजके भविष्यकी आशंकासे उनका चित्त

चञ्चल हो उठा। वे सोचने लगे कि वे लोग भरतके मही पाल हैं, स्वर्ग सुख भोगते हैं, हारनेपर इन लोगोंकी क्या दशा होगी? वे लोग क्या करेंगे? इस चिन्ताने उनपर बहुत प्रभाव डाला। लेकिन चाणक्य भी मनोविज्ञानके अच्छे जानकार थे। मनुष्य चारित्रकी कमजोरियां उनसे छिपी न थीं। उनकी सजग और प्रखर दृष्टि चारों ओर बराबर लगी रहती थी। उन्होंने चन्द्रगुप्तका युद्धसे विराग और करुणा जन्य औदासीन्यका भाव ताड़ लिया। बोले, बेटा,—"मैंने तुम्हारी दुर्बलताको देखा है। यह मानसिक दौर्बल्य मनुष्यको आलसी और स्वधर्म पालनसे विमुख बना देता है? कर्मक्षेत्रमें—जीवन संग्राममें इस प्रकारके दौर्बल्यका शिकार होना श्रेयस्कर नहीं है। मनुष्य-जीवनका इससे बड़ा शत्रु और नहीं है। अतएव इस दुर्बलताको छोड़कर वीरोंकी तरह युद्ध-क्षेत्रमें अग्रसर हो।"

चन्द्र-गुप्तपर इसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। मनुष्य चाहे कितना ही उदार, या परमार्थी क्यों न हो, लेकिन पारस्परिक स्वार्थके संघर्षमें वह प्राय अपने सिद्धांतोंसे विचलित हो जाता है। अस्तु। चन्द्रगुप्त युद्धमें अग्रसर हुए। सहसा आक्रमण करके उन्होंने नन्द-राजको विपद्ग्रस्त कर दिया, क्षत्रियोचित अनुप्राणनाने फिर उनमें अपार उत्साह भर दिया। स्वाभाविक दृढताके साथ उन्होंने महाराज महानन्दको प्रतिहत किया। उनका अपरिसीम साहस देखकर नन्द-सैन्य स्तम्भित रह गई। किन्तु युद्ध बराबर जारी रहा। सैनिक-गण भूमि-शायी होने लगे।

चन्द्रगुप्त और महानन्दका परस्पर 'द्वन्द्व-युद्ध' हो रहा था। दोनोंके हाथोंमें नंगी तलवारें चमक रही थीं। दोनों दुर्द्धर्ष बलवान थे। जय पराजय अनिश्चित थी। अकस्मात् चन्द्रगुप्तकी तल्वारके आघातसे नन्दकी तलवार हाथसे छूट गई। चन्द्रगुप्त नन्दका 'शिरश्च्छेद' करनेको तैयार हुए। महाराज नन्दने हाथ जोडकर चन्द्रगुप्तसे प्रार्थना की कि, "मेरे भाइयोंका खून तुम कर चुके हो? मुझे मत मारो। तुम मेरे भाई हो, आज मैं मगधका सम्राट नन्द, साधारण भिक्षुककी भांति बधुत्वके नाते प्राण-भिक्षा माग रहा हू, मुझे बचाओ।"

चन्द्रगुप्तका कोमल हृदय नन्दकी इन कातरोक्तियोंसे पिघल उठा। उन्होंने तलवारको दूर फेक दिया, और प्रेमार्द्र चित्तसे नन्दको हृदयसे लगा लिया। नन्दकी बची-खुची फौजने यह सुयोग देखकर चन्द्रगुप्तपर आक्रमण किया लेकिन इसी समय पहले मलयकेतु और पादको चन्द्रगुप्तकी फौजके आ जानेसे उनलोगोंका आक्रमण व्यथ हुआ।

ठीक इसी समय चाणक्य वहांपर आ पहुंचे। उन्होंने कहा,—"नन्दको मत मारो। कैद कर लो।" नन्द कैद कर लिए गए।

चन्द्रगुप्तने चाणक्यसे कहा, "गुरुदेव, अब तो नन्दके पास किसी प्रकारकी क्षमता, सम्पद्‌ अथवा अधिकार नहीं है। अब वह हमारा किसी तरहका अनिष्ट नहीं कर सकता। क्या इतने पर भी उसे बन्धन मुक्त कर देना उचित होगा?"

लेकिन चाणक्य इस प्रस्तावसे सहमत न हुए। बोले, कठोरताका वर्जन करके कोई भी राजनैतिक उद्देश्य सिद्ध करना असम्भव प्राय है। छल-बल, हिंसा और उत्तेजनाकी सहायता निहायत जरूरी है। आवश्यकतानुसार क्रूर अथवा कौटिल्यका अवलम्बन किये बिना राज-नीति सफल नहीं हो सकती। अनेक अवसरोंपर मीठी मीठी बातोंमें भुलाकर शत्रु की हत्या करनी पडती है। अतएव हृदयमें किसी प्रकारकी दुर्बलताको प्रश्रय देनेसे उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता। नन्दकी हत्या करनी होगी। यही मेरा अन्तिम निश्चय है। इसके बाद चाणक्यने चन्द्रगुप्त अथवा किसीकी भी—अनुनय पूर्ण बातोंपर ध्यान न देकर, नंदराजको मारकर, चन्द्रगुप्तको सिंहासनपर प्रतिष्ठित किया।

चाणक्य हमेशा दृढ प्रतिज्ञ रहे। उनके हृदयमें एक प्रकारकी प्रबल उन्मादना भरी हुई थी। यह उन्मादना, विचार शक्ति हीन उच्छृङ्खलताका नामान्तर मात्र न थी। उनका आत्मसम्मान ज्ञान बहुत प्रखर था। अपमानका प्रतिशोध लेनेके विचारसे उनके हृदयमें जिस प्रबल उत्तेजनाका सचार हुआ था, वह भी एक नियमित रूपसे ही स्फुटित हुई थी। तीक्ष्ण विवेचना शक्ति द्वारा निश्चित यह प्रतिशोध-स्पृहा उन्हें उद्देश्य साधनके मार्ग पर ले गई थी। उत्तेजनाको वे विवेक बुद्धि द्वारा सयत करना जानते थे। उनकी इच्छा अपराजेय थी। उसको वशीभूत करना असम्भव था। इस प्रकारकी दुर्दमनीय इच्छा शक्तिके बिना कोई भी 'उद्देश्य साधन' में सफल नहीं हो सकता, अभिलषित कार्यके पूर्ण करनेमें असमर्थ

रहता है। इसी इच्छा शक्तिके कारण ही वे आज भी संसारके अद्वितीय चिन्ता शीलके नामसे स्मरण किये जाते हैं।

इसी शक्तिके द्वारा साधारण ब्राह्मण सन्तान समर्थ गुरुरामदासने शिवाजीके द्वारा राज्य प्रतिष्ठा कराई थी। इसी प्रकारकी दृढ़ प्रतिज्ञा ही मनुष्यके मनुष्यत्वको विकसित करती है। इस प्रकारकी तेजस्विता ही दूसरोंके लिये आत्मोत्सर्ग करनेकी प्रवृत्ति उत्पन्न करती है। स्वजातिके लिए, स्वदेशके लिये, स्वधर्मके लिए आत्मोत्सर्ग करना ही प्रकृत यज्ञ है। इस यज्ञको ही मनीषी गण सर्वश्रेष्ठ यज्ञ कहा करते हैं। महात्मा चाणक्यने इसी यज्ञके लिए आत्म-बलिदान किया था। अतएव उनकी दृढ़ प्रतिज्ञता, पागलपन नहीं कही जा सकती। यही प्रकृत वीरका वीरत्व है। सब देशोंकी सब जातियोंका यही उपयुक्त आदर्श है।





चाणक्यकी शासन-नीति।



नन्द-वंशके पतन और मौर्या के सिंहासना-रोहणके सम्बन्धका ठीक ठीक विवरण नहीं पाया जाता। यद्यपि मगध-विद्रोहकी अनेक घटनायें विशाखदत्त प्रणीत 'मुद्राराक्षस' नामक नाटकमें लिखी हुई हैं, लेकिन उनमेंसे अधिकांश विश्वास योग्य नहीं है। कारण, मुद्राराक्षस असली घटनाके बहुत दिनों लगभग ७ शताब्दियोंके बाद लिखा गया है। कोई कोई कहते हैं, कि, चन्द्रगुप्त, नन्द-वंशके शेष राजाकी नीच वंशोद्भूता उपपत्नीकी गर्भजात सन्तान थे। सिकन्दरकी मृत्युके बाद, चन्द्रगुप्तने अपने गुरु विष्णुगुप्त कौटिल्य अथवा चाणक्यकी सहायतासे, और उत्तर देशीय भारतीयोंकी मददसे, सिन्धु नदके तटपर सिकन्दरकी फौजको विध्वस्त किया था। मगधका विद्रोह या नन्द वंशका अवसान इस युद्धके पहलेकी घटना है, अथवा बादकी, यह अनिश्चित है। तथापि यह निश्चित है कि चारों ओर दिग्विजय

करके, पाटलिपुत्र (पटना) में सिंहासनपर बैठकर, चन्द्रगुप्तने बहुत दिनोंके बाद भारतमें, एक विशाल साम्राज्य प्रतिष्ठित किया था।

सिकन्दरने भारतवर्षको छोडते समय राज्यका कोई उत्तराधिकारी न पानेके कारण, अपने विशाल साम्राज्यको अपने सेनापतियोंमें विभक्त कर दिया। एशियाकी बादशाहतके लिए एण्टीगोनस और सेल्यूकस नामक दो प्रतिद्वन्द्वी थे। अन्तमें इस प्रतिद्वन्द्वितामें सेल्यूकस विजयी हुए। इतिहासमें वे सिरियाके राजा "Selukats Nikator" के नामसे परिचित हैं। सिकन्दर द्वारा भारतवर्षके प्रान्तोंपर अधिकार प्राप्त करनेकी आशासे, उन्होंने सिन्धु पार करके चन्द्रगुप्तके साम्राज्यपर आक्रमण किया। लेकिन पंजाबके किसी स्थानमें हार गये, और लाचार होकर सन्धिके प्रार्थी हुए। सन्धिकी शर्तोंके अनुसार उन्होंने चन्द्रगुप्तको "Parapanisadai, Aria, Achrosia, Gedrosia," अर्थात् काबुल, हीरात, कान्धार और बेलूचिस्तान छोड दिया और भारतके साथ अविच्छेद्य मैत्रीभावको स्थिर रखनेके लिए चन्द्रगुप्तको अपनी कन्या व्याह दी थी।

भारतवर्ष और सीरियामें यह सन्धि बहुत दिनोंतक अव्याहत रही थी। कुछ दिनों बाद सेल्यूकसने मेगास्थिनीज नामक एक दूतको पाटलिपुत्र भेजा था। वे पहले Achrosia (कान्धार) में थे। अपने अवकाशके समय 'तत्कालीन' भारतकी दशा लिखते रहते थे। यद्यपि इस पुस्तकका सर्वांश अब नहीं मिलता,

तथापि इस बहुमूल्य पुस्तकसे अनेक ग्रन्थकारोंने अपने अपने ग्रन्थोंमें उद्धरण दिये हैं। कितने ही अविश्वास्य प्रवादोंके लिखे रहनेके कारण कुछ लोग उसकी प्रामाणिकताके सम्बन्धमें सन्देह करते हैं, लेकिन उनका लिखा हुआ विवरण ही 'तत्कालीन' घटनावलियोंकी एकमात्र ऐतिहासिक सामग्रीके रूपमें ग्रहण किया जाता है।

चन्द्रगुप्तके २४ वर्ष पर्यन्त राज्य शासनकी राजनैतिक घटनाओंके सम्बन्धमें विशेष कुछ विवरण नहीं मिलता। २९७ ई० पू० में जब उनके राजत्वका अवसान हुआ था तब नर्मदाके उत्तरका समग्र भारत और कान्धार पर उनका अधिकार था, यह निःसन्देह कहा जा सकता है। सम्भवतः दाक्षिणात्यमें भी उन्होंने अपनी विजय पताका उड़ायी होगी। लेकिन उपयुक्त प्रमाणोंके अभावसे इस सम्बन्धमें विशेष कुछ नहीं कहा जा सकता। मैसोरमें यह जनश्रुति है कि, नन्द-वंश दाक्षिणात्यमें राज्य करता था।

कहते हैं कि, चन्द्रगुप्त बड़े ही कठोर और निष्ठुर प्रकृतिके शासक थे। लेकिन हमें इसमें सर्वथा सन्देह है। अवश्य ही उनके गुरु और प्रधान मन्त्री चाणक्यकी राजनीतिमें 'नैतिक बाधा' नामक कोई वस्तु न थी। उनके अर्थ शास्त्रसे इसका पूरा पूरा आभास मिलता है। चन्द्रगुप्तकी मृत्युके सम्बन्धमें कुछ जाना नहीं जाता। जैनियोंका कहना है कि, चन्द्रगुप्त जैन थे और 'प्रायोप-वेशन' में उनकी मृत्यु हुई थी।

मौर्य—राज्यका आयतन वृहत् था। और 'कौटिलीय अर्थ शास्त्र' में वर्णित प्रणाली द्वारा शासित होता था। चन्द्रगुप्तका राज कोष हमेशा पूर्ण रहता था।

चन्द्रगुप्त और उनके सुदक्ष मन्त्री चाणक्यके परिचालनसे राज्य शासन प्रणाली अवश्य ही अधिकतर सुनियन्त्रित हुई होगी। अबुल फजल प्रणीत 'आइन ए-अकबरी' से अकबरकी शासन प्रणालीके सम्बन्धमें जो कुछ पता लगता है, उससे प्रतीत होता है कि, उनके समयमें दीवानी विभाग (Civil) नहीं था। विचार-विभागके दो—चार आदमियोंको छोड़ करके रसोईदारसे लेकर सेनापति पर्यन्त, सभीकी गणना सेना विभागमें की जाती थी। लेकिन मौर्य शासन प्रणाली अधिकतर सुनियन्त्रित थी। मौर्यों का बाकायदा एक दीवानी विभाग (Regular civil Administration) और विशाल स्थायी सैन्य (Huge standing Army) थी।

यह वाहिनी अकबरकी वाहिनीकी अपेक्षा अधिक बलवती थी। अकबरकी फौजको पोर्तुगीजोंने शिकस्त दी थी, और मौर्य-वाहिनीने सेल्यूकसको पराभूत किया था। दूरवर्ती प्रदेशों और कर्मचारियोंपर मौर्यों का प्रभाव बहुत अधिक था। मौर्यों की तरह अकबरका गुप्त चर विभाग पूर्ण नहीं था। चन्द्रगुप्तसे अशोकके शासन कालतक इस प्रणालीमें कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ।

चन्द्रगुप्तकी राजधानी पाटलिपुत्रमें थी। पाटलिपुत्र कई मीलतक लम्बा और चौड़ा था। इसका अधिकांश भाग आजकल

पटना, बाकीपुर और कई एक गावोंके नामसे परिचित है। प्रसिद्ध 'कुसुमपुर' भी सम्भवत पाटलिपुत्रमें शामिल कर लिया गया था। शोण और गंगाके सगमपर इस नगरका निर्माण हुआ था। कारण, ऐसे ही स्थान शास्त्रोंके अनुसार आत्म रक्षाके लिये प्रशस्त माने गये हैं, आधुनिक पटनामें वे सब सुविधायें नहीं हैं। आजकल सगम दानापुरके किलेके नीचे है। ६४ फाटकों और ५७० स्तम्भोंसे युक्त सुदृढ़ काठकी प्राचीर द्वारा नगर सुरक्षित था, और प्राचीर के बाहर शोण नदीके जलसे परिपूर्ण परिखायें थीं। राज-महल बहुमूल्य वस्तुओंसे सुसज्जित था। समग्र जगत्की विलास सामग्रियोंसे राज-प्रासाद परिपूर्ण था। शिकार और पशुओंके साथ मल्लयुद्ध आदि राजकीय प्रधान क्रीडायें थीं। राज-सभामें वेश्यायें रहती थीं, वे राज सेवाकी अधिकारिणी थीं।

भारतवर्षमें प्राय बादशाह ही अप्रति हतभावसे शासन करते थे। कानूनन् राजा राज काजमें किसीकी सम्मति लेनेके लिए बाध्य होता नहीं था। तथापि एक दल मन्त्रियोंकी सहायतासे राज कार्य निष्पन्न होता था। चाणक्य प्रणीत 'कौटिलीय अर्थ-शास्त्र' के अनुसार ॥ मनुष्योंसे अधिक मन्त्री बनानेकी कोई जरूरत नहीं थी। स्वेच्छानुसार अत्याचारके मार्गमें एक मात्र विघ्न था ,विद्रोह अथवा गुप्त हत्याका भय। चन्द्रगुप्तने विद्रोह करके और राज वशका उच्छेद करके साम्राज्य प्राप्त किया था। अतएव उन्हें अपने जीवन भर सतर्क होकर रहना पडा था। कहते हैं कि एक घरमें वे दो रातोंसे अधिक शयन नहीं करते थे।

साम, दाम, भेद और दण्ड,—इस नीतिका अवलम्बन करके चाणक्यने सुश्रृङ्खला-पूर्वक चन्द्रगुप्तके राजत्वको 'धर्म राज्य' में परिणत कर दिया था। जिस अपूर्व युक्तिसे उन्होंने मगध राज्यकी नीति, धर्म, स्वास्थ्य, कृषि, शिल्प, वाणिज्य और सम्पत्ति आदिको उन्नतिके उत्तु ग-सौधपर पहुँचा दिया था, उसके मूलमें महाभारतके युगकी राजनीति काम कर रही थी। जिस राजनीतिका सहारा लेकर चाणक्यने व्यभिचारी और अत्याचारी नंद वंशका ध्वंस-साधन किया था, वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ-सिद्धिके लिए नहीं था। उसका उद्देश्य प्रकृत सत्यकी प्रतिष्ठा करना था। सिर्फ वैयक्तिक-भावसे नन्द वंशका ध्वंस करना उन्हें अभीष्ट नहीं था। चाणक्यने मगध साम्राज्यकी रक्षाके लिए जिन उपायोंका उद्भावन किया था, जिस नीतिका आश्रय लिया था, वे उपाय—वह नीति सचमुच राजनीतिके नामसे अभिहित करने योग्य है। उन्होंने मगध साम्राज्यके रक्षण और परिवर्त्तनके लिए जिस राज नीतिका अवलंबन किया था, वह संक्षेपमें नीचे लिखी जाती है। उनका बनाया हुआ 'अर्थशास्त्र,' 'चाणक्य-नीति' और विदेशियों तथा स्वदेशियों द्वारा लिखे हुए भ्रमण और 'निबंधों' से ही हमारे वर्णन करने योग्य सामग्रीका संकलन करके नीचे लिए रहे हैं। चाणक्यने सम्राट् चन्द्रगुप्तको इसी नीतिके अनुसार राज काज चलानेका परामर्श दिया था। यद्यपि तबसे अबतक अवस्थामें बहुत कुछ परिवर्त्तन हो चुका है, और अवस्थाके अनुसार व्यवस्था करना बुद्धिमानोंका काम है, यह ठीक है, तथापि चाणक्यकी राज-

-नीतिका यदि और किसी मतलबसे नहीं तो सिर्फ आलोचना करनेके विचारसे ही अनुशीलन करना चाहिए, इससे बहुत लाभ होनेकी सम्भावना है। संक्षेपमें मैं उस रीति-नीतिका 'सार-संकलन' करके नीचे लिख रहा हूं, इच्छा होतो, ध्यान पूर्वक पढ़िये—

सबसे पहले भूपालोंको अपना मन जीतना चाहिये, और बाहरी शत्रुओंको चित्तपर विजय प्राप्त किये बिना शत्रुओंपर विजय प्राप्त करने जाना विडम्बनामात्र है।

राजाका कर्तव्य प्रजा पालन है, प्रजा पीडन नहीं। जो राजा प्रजाको पुत्रवत् समझता है, वही राजा, प्रकृत राजा है। राजाकी जरा सी असावधानी या प्रमत्ततासे अनेक विपत्तियोंके—भयानक दुर्घटनाओंके होनेकी सम्भावना है। अतएव उन्हें सदासतर्क रहना चाहिए। राजाको दैनिक कार्य नियमितरूपसे करना चाहिये। दिन मानको आठ अंशोंमें विभक्त करके, चाणक्यने इस प्रकार कार्यावलीकी सूची प्रस्तुत की थी। यथा —

प्रथमांश में—द्वारपालोंका नियोग और आय व्ययका हिसाब रखनेवाले कर्मचारियोंके कार्यों का पर्यवेक्षण करना चाहिये।

द्वितीय भागमें—नागरिकों और जनपद निवासियोंके कार्यों-की देख भाल करनी चाहिए।

तृतीय-भागमें—स्नान, भोजन, विश्राम और अध्ययन करना करना;

चतुर्थ भागमें—राज-कर ग्रहण और अध्यक्षोंके कार्यों की देख रेख करनी चाहिए।

पञ्चम-भागमें—मन्त्रि-मण्डलके मतामतको जानना चाहिए।

षष्ठ-भागमें—विलास-सम्भोग अथवा सद्विषयोंका चिन्तन करना चाहिए।

सप्तम-भागमें—घोड़े हाथी, पैदल और रथों आदिका निरीक्षण करना चाहिए।

और आठवें-भागमें—सेनापतियोंके साथ युद्ध स बधी बातों-की आलोचना करनी चाहिए।

सायंकाल होनेपर भगवानकी उपासना और सन्ध्या आह्निक आदि कार्यों को समाप्त करना चाहिए। चाणक्यने दिनकी तरह रातको भी आठ भागोंसे विभक्त किया था।

पहला-भाग—गुप्तचरोंसे मुलाकात।

द्वितीय-भागमें—आहार, विश्राम आदि।

तृतीय भागमें—तूर्य ध्वनि करके शयनागारमें प्रवेश।

चौथे और पाचवें भागमें—निद्रा-योग।

छठे भागमें—फिर तूर्य ध्वनिके साथ शय्या-त्याग करके। शास्त्रोंकी आलोचना और दिनके कर्त्तव्योंका चिन्तन।

सातवें भागमें—शासन-नीति सम्बन्धी चिन्ता और गुप्तचरों-को इतस्तत प्रेरण।

आठवें भागमें—आचार्य, शिक्षक और प्रधान पुरोहितोंका आशीर्वाद ग्रहण। चिकित्सक, पाचक और ज्योतिषियोंसे भेंट और फिर वृष तथा सवत्सा गौकी प्रदक्षिणा करके राज सभामें जाना। यही रातके कर्त्तव्य माने जाते थे।

राजाको उचित है कि,

विचार-प्रार्थियोंको कभी द्वारपर खड़े होनेको न कहे। कारण राजा यदि प्रजा-जनोंका अगम्य हो जाय, अर्थात राजाके साथ साक्षात करना प्रजाके लिए दुस्साध्य हो जाये, प्रजा-वर्गके साथ अन्तरंगता नहीं होती, घनिष्ठता प्राप्त करनेके लिए सुयोग नहीं मिलता। राजा यदि यह आवश्यक अथच कठोर भार कर्मचारियोंके सिरपर रख दें तो, राज्यमें विपर्यय हो जाता है। अशान्तिका प्रादुर्भाव होता है। प्रजा विक्षुब्ध और सन्त्रस्त हो उठती है। राजाको प्रजाका विराग भाजन होना राज्य नाशका लक्षण है। विश्रृङ्खला फैल जानेसे शत्रुओंकी बन आती है और राजाको अपने शत्रुओंकी कदम बोसी करनी पड़ती है। अतएव प्रजाके साथ घनिष्ठता बढ़ाकर—उसके दिलोंपर अपने गुणोंका सिक्का जमाकर अपने राज्यकी नींव मजबूत करनी चाहिए। पापी, पुण्यात्मा, अनाथ, आतुर, बालक और वृद्ध सभीके कार्यको राजाको स्वयं देखना चाहिये और यथायथ विचार करना चाहिए। प्रयोजनीय कार्योंको छोड़ रखना अनुचित और असंगत है। अतः जरूरी कामोंको तुरन्त निपटा देना चाहिए। विदेशी अथवा अपुरस्कृत पुरुषको अपना पार्श्वचर और अन्तःपुरके कर्मचारियोंकी मातहत फौजमें कभी न रखना चाहिए। अगर कोई विदेशी स्वदेश-द्रोही हो, तो भी उसे उपर्युक्त कार्योंमें नियुक्त करना उचित नहीं है। मुख्य रसोईदारको उचित है कि, राजाके लिये सुरक्षित स्थानमें भोजन तैयार कराये और उसे भलीभांति

पर्य्ये वेक्षण करे। राजाको चाहिए कि, तैयार हुए आहारसे कुछ अंश लेकर पहले अग्निको और बादको पक्षियोंको प्रदान करें, और सुपरीक्षित होनेके बाद फिर भोजन करे। अगर अग्निका धुआ आहार छोड़नेपर नीले रंगका हो जाय, तो समझ लेना चाहिए कि भोजन विष-मिश्रित है—जहरीला है। अथवा यदि उसे खाकर चिड़िया प्राण त्याग कर दे, तो निश्चय कर लेना चाहिए कि, वह विषाक्त अतएव खानेके योग्य नहीं है। प्रधान पाचकको इस ओर खूब ध्यान रखना चाहिए। जिससे खाद्य विस्वादु अथवा विषाक्त न हो।

चिकित्सकोंको प्रतिक्षण राजाके साथ साथ रहना चाहिए और ज़रूरत पड़नेपर खाद्य वस्तुकी परीक्षा करनी चाहिए। यही नियम औषध इत्यादिके सेवनमें भी करना चाहिए। अर्थात् किसी औषधकी जब विशुद्धता प्रमाणित हो जाये तो, उसे पहले पाचक और वैद्य स्वयं आस्वादन करें, तत्पश्चात् राजाके हाथमें उसे दें। प्रत्येक प्रकारकी भोज्य और पेय आदि वस्तुओंमें इस तरहकी सतर्कताका अवलम्बन करना चाहिए। राज सेवकोंको चाहिए कि वे स्वयं स्नान करके और अपने हाथोंको अच्छी तरह धो धाकरके कपड़े और प्रसाधन इत्यादि राजाको दें, प्रसाधन द्रव्यको राजाके हाथमें देनेसे पहले उन्हें उसे अपनी देहमें व्यवहार करके देख लेना चाहिए कि, वह अच्छी तरह परिष्कृत है, अथवा नहीं। उसमें किसी प्रकारकी दूषित वस्तुओंका सम्मिश्रण तो नहीं है। इसकी परीक्षा उन्हें अवश्य करनी चाहिए। अगर बाहरका

कोई आदमी कोई चीज राजाको दे तो भी भृत्योंको उचित है कि उपर्युक्त नियमोंका पालन करें, अर्थात् अपरीक्षित और खाद्य वस्तुओंको राजाके हाथमें देनेसे पहले खूब अच्छी तरह जाच लेना चाहिए। जिन आमोद—प्रमोदोंमें आग, बारूद, और अस्त्र इत्यादिका व्यवहार न हो, खिलाडियोंको उचित है, कि वैसे ही खेलों द्वारा राजाका मनोरंजन करें।

नौचालक (मल्लाह) यदि खूब विश्वासी हों, और राजाके आरोहणके लिए एक नावके साथ दूसरी नाव बंधी हुई हो, तो राजाको नावपर चढ़ना चाहिए। उनके नावपर चढ़ते समय फौजको नदी तटपर उपस्थित होकर अपेक्षा करना चाहिए। जो नाव जल-वायु द्वारा नष्ट हो चुकी है, राजाको उसपर कभी न बैठना चाहिए। मछलियों और हिंस्र जन्तुओंसे रहित स्वच्छ तालाबमें ही राजाको स्नान करना चाहिए। सर्प, शत्रु और पू क्रार जानवरोंसे खाली जगन्लमें ही उनका टहलना चाहिये। और अगर विदेशी राजाके साथ मुलाकात करना हो तो, मन्त्रियों को साथ लेकर मिलना चाहिये।

डाकुओं, सापों और शत्रुओंसे शून्य जङ्गलमें गति शील वस्तु पर तीर फेंकनेका अभ्यास राजाको करना चाहिए। अस्त्र शस्त्र धारी अनुचरोंके साथ साधु सन्यासियोंसे मिलना चाहिए। फौजके युद्धके लिए तैयार होनेपर राजाको उसका निरीक्षण करना चाहिए। राजाके बाहर जाने और वापस लौटनेपर, ऐसा प्रबन्ध होना चाहिए, कि सड़कें दोनों ओरसे सुरक्षित रहें और यहापर

कोई अस्त्रधारी पुरुष, सन्यासी अथवा विकलांग व्यक्ति न रहे, इसकी भी व्यवस्था करनी चाहिए।

राजा और उसके कर्मचारियोंको उचित है कि, वे अपने राज्यमें रहनेके लिए विदेशियोंको प्रलोभन दें, अथवा अपने राज्यके जन बहुल नगरसे मनुष्योंको लेकर नूतन नगर निर्माण करें, या ध्वसावशिष्ट पुराने नगरोंको आबाद करनेकी कोशिश करें।

जगह जगह पर छोटे छोटे गावोंके बसानेकी ओर भी यथेष्ट ध्यान होना चाहिए। इन गाँवोंको इस ढगसे बसाना चाहिए, जिसमें समय आनेपर एक गाववाले दूसरे गाववालोंकी मदद कर सकें। गावोंकी सीमा, या 'हद' निर्देश करनेके लिए वृक्ष इत्यादि लगाना चाहिये।

आठ सौ गावोंके बीचमें 'स्थानीय' चार सौ गावोंके बीचमें "द्रोण मुख," दो सौ गावोंके बीचमें "खार्वटिक" और दशगावोंके बीचमें 'सग्रहण' नामक दुर्ग (किला) बनवाना चाहिए। इन किलोंमें जिससे बाहरी वैरी और अन्त शत्रु न प्रवेश कर सकें, इसकी कठोर व्यवस्था थी। जो लोग देखनेके लिए अथवा अन्य किसी कामसे किलेके अन्दर जाना चाहते थे, उन्हें किलेके फाटक पर 'मुद्रा' (Pass Port) दिखलाना पड़ता था। किलेके अन्दरकी बनावट भी अद्भुत ढगकी हुआ करती थी। उसके चारों ओर ईंटोंका घिराव और जलपूर्ण परिखाएँ रहा करती थीं, अन्दर कितने ही 'गुप्त द्वार' भी होते थे। साराश यह कि दुर्गको मजबूत और सुरक्षित बनानेके लिए

जिन जिन बातोंकी जरूरत हुआ करती है, उनका पूर्ण प्रबन्ध होता था।

पुराने जमानेमें हिन्दू राजोंके यहा 'चतुरग' फौज रखनेका नियम था। चन्द्रगुप्तके राजत्वकालमें मगध साम्राज्यमें भी इसी प्रकारकी 'चतुरग' फौज थी। लेकिन उनकी उस प्रचड वाहिनीमें ग्रीक् नियमका पालन किया जाता था। नंद वशके अन्तिम राजा महानन्दके यहा चतुरग फौजमें, ८०,००० घोडे, २ ००००० ८००० रथ और ६,००० हाथी थे। चन्द्रगुप्तकी फौजमें ६००००० पैदल, और ६००० हाथी थे, लेकिन घोडोंकी सख्या घटकर ३०००० ही रह गई थी।

रथोंकी सख्याका ठीक ठीक पता नहीं चलता। मेगास्थिनीज अपने 'भारतीय भ्रमण' मे स्पष्ट लिखते हैं कि, इस विराट वाहिनीका वेतन वगैरह सम्पूर्ण खर्च खजानेसे दिया जाता था। 'कौटिलीय अर्थ शास्त्रके अनुसार सम्राट् चन्द्रगुप्तकी वाहिनीके निम्नलिखित विभाग थे—

"Guards of ten men', Companies of hundred and Battalions of thous and"

मेगास्थिनीजका कहना है कि, उक्त वाहिनी एक रण समिति (War Office) द्वारा परिचालित होती थी। ३० सभ्यों, द्वारा ६ पचायतें बनाकर निम्नलिखित ६ विभाग किये गये थे—

प्रथम विभाग —नौसेना-विभाग।

द्वितीय विभाग —निर्यासन, सेनाकी आहार्य सामग्रीका सरबराह करना और सैन्य-विभाग।

तृतीय विभाग —पैदल फौज।

चतुर्थ विभाग—घुड़सवार फौज।

पचम विभाग—रथोंकी फौज।

षष्ठ विभाग—हाथियोंकी फौज।

इस प्रकारके विभागोंका परिचय अन्यत्र नहीं पाया जाता। अतएव इस तरहके अपूर्व कौशलके उद्भावनका गौरव चान्द्रगुप्त और उनके गुरु तथा प्रधान मन्त्री विष्णुगुप्त चाणक्यको ही प्राप्त है। चान्द्रगुप्तकी इस वाहिनीमें मनुष्योंका क्रम इस प्रकार प्रकार था —

हर एक हाथीपर एक महावतके अलावा और तीन तीन सैनिक रहते थे। प्रत्येक रथमें ४ घोड़े अथवा दो घोड़े लगते थे। घुड़सवार फौजियोंके पास ग्रीकोंकी 'सौनिया' Saunia की तरह दो दो भाले रहते थे। पैदल फौजका मुख्य हथियार था, कमरमें लटकती हुई एक तेज तलवार। अलावा इसके तीर, धनुष और भाले भी रहते थे। तीर इतने तेज होते थे, और धनुषके द्वारा शत्रुओंपर उनके फेंकनेकी प्रणाली कुछ ऐसी अद्भुत थी, कि तीर शत्रुओंकी ढालें और कवचोंको छेद्कर पार हो जाते थे। और दुश्मनोंके शरीरको छिन्न-भिन्नकर देते थे। लोग आत्म-रक्षाके लिये अनेक प्रकारके कवच पहना करते थे। कोई फौलादसे अपने शरीरको कौशल पूर्वक ढक लेता और कोई हाथी

घोडा, और गैंडा आदिकी खालोंसे अपने अङ्गोंको आवृत रखता था। बोझा ढोनेमें गधों, खच्चरों और घोडोंका व्यवहार किया जाता था। चाणक्यके अर्थ शास्त्रके अनुसार प्रतिवाहिनीके पीछे (Ambulance) एकदल, शुश्रूषाकारी और चिकित्सक वगैरह रहते थे। लेकिन मौर्य राज गण सिर्फ फौजके ही आसरे न थे। षडयन्त्र, गुप्तचर, शत्रु-वश अवरोध और आक्रमण—किलों और दुश्मनोंकी सल्तनतोंपर फतहयाबी हासिल करनेके लिए चाणक्यकी बतलाई हुई इस रचनीतिका अनुसरण किया जाता था। यही मौर्य-शासन प्रतिष्ठाकी आनुषंगिक (Subsidiary) राजनीतिकी प्रकृतिका निर्णय करती है। अर्थशास्त्र प्रणेताने निःसंकोच यह स्थिर किया है कि, बल प्रयोगकी अपेक्षा षड्यन्त्र अच्छा है। कारण षड्यन्त्र करनेवाला अपनेसे अधिक क्षमतावान्—शक्तिशाली राजोंको परास्त कर सकता है अर्थ शास्त्रमें वर्णित राजनीतिक मैकियावेली (Machiavelli) के 'Prince' में वर्णित प्रणालीके साथ मूलतः साम्य है।

लेकिन भारतवर्षमें उस समय और उसके बाद भी 'अर्थ शास्त्र' में वर्णित राजनीति सर्व सम्मत नहीं मानी जाती थी। कुछ लोग इसके विरोधी भी थे। महाराज हर्षवर्द्धनकी सभाके कवि बाण भट्टने इस राजनीतिकी बडी निन्दा की है। उनका कथन है कि, कौटिल्यकी कठोर और निष्ठुर राजनीतिके जो पृष्ठ पोषक हैं, परिचालक हैं, क्या उन लोगोंके हृदयमें धर्मनामकी कोई वस्तु है?

जादूके अभ्यासले कठोर हृदय वाले पुरोहित जिसके शिक्षक हैं। प्रतारक और प्रवचक जिसके मन्त्री हैं, घृणित अर्थ लिप्सा ही जिसका उद्देश्य है, ध्वंस कर कार्यों में जो मत्त है, और जो भाइयोंका घातक है, उसके पास धर्म नामको कोई चीज़ रह सकती है क्या ?

राजनीति सम्बन्धी ग्रन्थ समूहमें शासन कार्य दण्डनीतिके नामसे अभिहित किया गया है। चन्द्रगुप्त उक्त ग्रन्थ निचयकी इस विषयकी नीतिका जैसा अनुमोदन करते थे, यह उनकी कार्यावलीका पर्यवेक्षण करनेसे साफ मालूम हो जाता है। अर्थशास्त्र, या ग्रीक् इतिहास (Greek history) के पढ़ने से प्रतीत होता है कि, आर्थिक और दण्ड-सम्बन्धी नियमावली अत्यन्त कठोर थी। मेगास्थिनीजका कहना है कि, मैं जब सम्राट्के शिविरमें था, तब ४ लाख आदमियोंमें १२० (Drachmaal, 20) से अधिककी चोरी न होती थी। पकड़े जानेपर, चोरी होनेसे तीन दिनके बीचमें चोर यदि प्रमाणित न कर सकता कि, जिसकी चीज़ मैंने चुराई या आत्मसात् की है, उससे मेरी दुश्मनी है, तो उन उपायोंका अवलम्बन किया जाता था, जिनसे वह मजबूरन अपना दोष स्वीकार कर ले। नियम था कि, "जिसपर विश्वास हो जाय कि वह दोषी है, उसे यन्त्रणा देना चाहिए," लेकिन पुलिस प्राय अपनी इस क्षमताका अपव्यवहार करती थी। इसके भी विशिष्ट प्रमाण पाये जाते हैं। अर्थशास्त्र प्रणेताने १८ प्रकारकी सजाओंका उल्लेख किया

है। और कहा है कि, प्रतिदिन एक एक अथवा कइयोंका एक साथ ही प्रयोग करना चाहिए। जुर्माना, अगच्छेद और फासी वगैरह अनेक प्रकारकी सजायें दी जाती थी। ब्राह्मणोंको यन्त्रणा नहीं दी जाती थी, लेकिन भर्त्सना और निर्वासन दण्डकी व्यवस्था थी। कठोर होनेपर भी अन्याय भावसे शासन न किया जाता था। अर्थशास्त्रके अनुसार एक राज्य चार भागोंमें विभक्त और ४ कर्मचारियों द्वारा शासित होता था। राजधानीकी ४ शाखायें थीं। ४०।५० गृहस्थोंके भार प्राप्त (गोपों) कर्मचारियों की सहायतासे प्रत्येक विभागके शासनके लिए एक शासक था। और सर्वपरि, समस्त नगरीका शासक एक नागरिक था। नगरके हु ग्रामको अपने इलाकेकी प्रत्येक खबर रखनी पड़ती थी। गोपोंको स्त्री और पुरुषका नाम, धाम, गोत्र, जाति, आय और व्ययका समाचार जानना आवश्यक था। और स्थायी 'आदम सुमारी'का स्थिर करना कर्मचारियोंका एक प्रधान कर्त्तव्य था। अग्नि विषयक और स्वास्थ्य सम्बन्धी सतर्कताका अवलम्बन करना पड़ता था। अगर कोई अपने मनसे किसीके घरमें आग लगाता था, तो उसे उसी जलती हुई आगमें फेंक दिया जाता था।

चन्द्रगुप्तकी राजधानीकी म्यूनिसिपालिटीमें ६ विभाग थे। उन विभागोंकी व्यवस्था इतनी सुन्दर थी, कि लोगोंको आश्चर्य होता है। वस्तुतः दूरदर्शी चाणक्यका दिमाग और अनुसन्धान-शक्ति प्रबल थी।

प्रथम विभाग—शिल्प—शिल्पी-गण विशेष रूपसे राजकर्म

चारी गिने जाते थे। और यदि कोई किसी तरहसे उन लोगोंकी कार्य क्षमताको नष्ट कर देता था तो उसे कठोर दण्ड—प्राण दण्ड तक दिया जाता था। शिल्पियोंका वेतन, उन लोगोंका नियमित काम और बढ़िया चीजोंका व्यवहार, इत्यादिका पर्यवेक्षण करना भी इसी विभागके अन्तर्गत था।

द्वितीय-विभाग—विदेश सम्बन्धी कार्य—इस विभागका मुख्य कार्य था, विदेशियोंके आने जानेका निरीक्षण करना, उन लोगोंको रहने सहनेका स्थान देना, उन लोगोंकी सम्पत्तिकी रक्षा करना, चिकित्सा और अन्त्येष्टि इत्यादिका प्रबन्ध करना। अर्थात् विदेशियों-के सम्बन्धका यावत् कार्य था, वह सब इस विभागको सौंप दिया गया था, इस प्रबन्धसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि, उन दिनों भारत वर्षके साथ विदेशियोंका निरवच्छिन्न सम्बन्ध था।

विदेशी आतिथ्य विभाग।—विदेशियोंके आनेपर उन लोगोंके ठहरनेके लिये निवास-स्थान और परिचर्याके लिए नौकर चाकर दिये जाते थे। ये नौकर-चाकर वगैरह विदेशियोंके कार्य कलाप देखा करते थे। जबतक वे लोग यहांपर रहते थे तबतक राज भृत्य गण उनका बराबर अनुगमन किया करते थे।

अगर किसी विदेशीकी मृत्यु हो जाती थी, तो उसकी स्यक सम्पत्ति उसीके किसी आत्मीयको सौंप दी जाती थी। अगर विदेशी बीमार हो जाता था, तो उसकी चिकित्साका उपयुक्त प्रबन्ध किया जाता था, और यदि कोई मर जाता था, तो उसकी मृत देहका सत्कार किया जाता था।

तृतीय विभाग—जन्म मृत्यु—'आदम सुमारी' और 'Poll tax' वसूल करना ये दो इस विभागके मुख्य कार्य थे।

चतुर्थ विभाग—वाणिज्यकी कडी देख-रेख, पण्य शुल्क वसूल करनेकी नीति भारतीय शासकोंने सदैव सुरक्षित रक्खी है।

पंचम विभाग—गुप्तचर—चन्द्रगुप्तके समयका गुप्तचर विभाग विशेष रूपसे उल्लेख योग्य है। उस जमानेमें महाभारतीय युगकी 'गुप्तचर प्रणाली' अनुसृत होती थी। गुप्तचरोंके लिए, वीर साहसी चिरकुमार (बाल ब्रह्मचारी) बुद्धिमान् और ब्राह्मण होना आवश्यक था। वे लोग राज काजमें ही जीवन अतिवाहित करते थे। राजनैतिक काम ही इनके आमोद प्रमोद और जीवन-यापनकी सामग्री थे। ये लोग अनेक भाषाओंमें अभिज्ञ होते थे, इतिहास और भूगोलके विलक्षण पंडित होते थे। गावों या नगरोंके आसपास कहा समुद्र है? कहा नदी है, कहाँ पहाड़ है, और कहाँ समतल भूमि है, इसकी विशेष रूपसे वे लोग खबर रखते थे। सब प्रकारके भौगोलिक तत्व उन्हें आयत्त होते थे।

इसके अतिरिक्त प्रजा वर्गकी क्या अवस्था है, वे लोग किस प्रकार कालक्षेप करते हैं, कौन क्या कहता है, किसकी कैसी दशा है किस घरमें कितने मनुष्य रहते हैं। उन लोगोंका स्वास्थ्य कैसा है? इत्यादि अनेक प्रकारकी 'नाड़ी-नक्षत्र' तककी सब बातें उनलोगोंको मालूम रहती था। स्वपक्ष और विपक्षके शिविरमें अपनेको छिपाये रखकर सब वृत्तान्त जान लेते थे। ये लोग

बहुत ही रसिक पुरुष और विलक्षण होते थे। अत बड़ी आसानीसे कौशलपूर्वक शत्रुओंमें भी घुस जाते थे, और वहाँकी ज्ञातव्य बातोंको जान लेते थे। ये लोग अनेक भाषाओंमें अभिज्ञ होते थे, अत उन्हें किसी विशेष असुविधाका सामना न करना पड़ता था। ये लोग अपनेको छिपाने या छद्मवेश धारण करनेमें इतने पटु होते थे कि, उन्हें अपने पक्षके परिचित व्यक्ति भी पहचान न सकते थे। जिस प्रकार गत यूरोपीय महा समरमें जर्मनोंने संसार भरमें अपने गुप्तचर फैला रक्खे थे। उसी प्रकार सम्राट् चन्द्र-गुप्तके गुप्तचर भी इधर उधर फैले रहते थे। ये लोग जिस प्रकार विदेशी राज्योंकी अवस्थाकी खोज खबर रखते थे, उसी प्रकार अपने राज्यके आन्तरिक व्यापारोंका भी अन्वेषण करते रहते थे।

मन्त्रियोंकी सहायता लेकर राजा गुप्तचर नियोगमें प्रवृत्त होते थे। गुप्तचर भी अनेक प्रकारके हुआ करते थे। यथा — कपट छात्र गुप्तचर, उदासीन गुप्तचर, गृहस्थ गुप्तचर, तीक्ष्ण गुप्तचर, विष प्रयोगकारी गुप्तचर, और भिखारी गुप्तचर इत्यादि। इन लोगोंको अनेक प्रकारके छद्म वेश धारण करने पड़ते थे, और नाना भाँतिके भले बुरे उपायोंका अवलम्बन करना पड़ता था। धन और पदवियाँ देकर राजा गुप्तचरोंको सन्तुष्ट रखते थे। अगर कोई षड्यन्त्र करनेकी चेष्टा करता था तो उसे गुप्तरूपसे दण्ड दिया जाता था।

छात्र—श्रेणीके गुप्तचरोंका काम था, लक्षण, जादू, साम्प्रदायिक नीति इन्द्रजाल और शकुनि विद्याका अध्ययन। इन सब

विद्यार्थियोंकी सहायतासे ये लोग, अन्य लोगोंसे मिल जुलकर रहते थे। और उन लोगोंका विवरण जान लेते थे।

सुचतुर और जीविकार्थिनी ब्राह्मण विधवायें भी जासूसी करती थीं। उन लोगोंको 'परिव्राजिका गुप्तचर' कहा जाता था। वे राज मन्त्रियोंके अन्त पुरमें आया जाया करती थीं, और इस प्रकार उनके घरोंका हाल अनायास ही मालूम कर लेती थीं।

विद्यार्थी गुप्तचरगण आदमियोंकी भीड़में तर्कके छलसे राजाके गुणका कीर्त्तन करते थे। प्रजाजनोंका राजाके प्रति कैसा मनोभाव है इसके जाननेकी ओर उनका ध्यान लगा रहता था। वे लोग इस बातकी बड़ी चेष्टा करते थे कि, उन साधारण राज्यके निकट-वर्ती किसी शत्रुसे न मिल जाँय, या किसी निर्वासित राज-कुमारके साथ मिलकर झगड़ा झंझट न खड़ा कर दें, अथवा किसी अन्य जातिको उत्तेजित करके उसके द्वारा राज्य-क्रान्ति करनेकी चेष्टा न करें, विद्यार्थी गुप्तचरोंको इस बातकी सख्त हिदायत थी कि असन्तुष्ट प्रजा वर्गको पूर्णरूपसे सन्तुष्ट किया जाय, अथवा पारस्परिक मनोमालिन्य हो जाय। चाणक्य बड़े ही तीक्ष्ण बुद्धि थे। वे मनो-विज्ञानसे भलीभांति परिचित थे। मनुष्यकी हृद्-गत कमजोरियों और दृढतावोंसे भी अनभिज्ञ नहीं थे। उनकी प्रकृतिमें एक बहुत बड़ी विशेषता यह थी कि, वे बाहर ही बाहर शत्रुका नाश कर देते, और प्रत्यक्ष रूपसे उससे अलग ही रहते। वे मनुष्यपर अधिकार करनेके लिए सदैव उन उपायोंका अवलम्बन करते थे, जो अव्यर्थ होते थे। चाणक्य-

का दिमाग प्रसिद्ध जर्मन राजनीतिज्ञ प्रिन्स बिस्मार्कसे किसी अशमें कम न था।

विदेशी राजोंके राज्यको अपमानित, लाछित, निर्यातित प्रजाको उस राज्यके विरुद्ध भड़काकर अपने पक्षमें खींच लेना भी गुप्तचरोंका एक काम था। अहङ्कारी व्यक्तियोंके पास जाकर और उसे उसके स्वामीकी गुण ग्राहकता, औदार्य, शालीनता इत्यादि बातोंके विचारकी अक्षमता बतलाकर और उस अहङ्कारी व्यक्तिको प्रशसासे सन्तुष्ट करके अपने पक्षमें मिला लेना भी चरोंका काम था।

जो लोग राजमन्त्रीका कार्य सुन्दरतापूर्वक सम्पन्न कर चुके हैं। राजनैतिक कार्यमें जो यथेष्ट अभिज्ञता अर्जन कर चुके हैं, उन्ही लोगोंको दौत्य-कार्यमें नियुक्त किया जाता था। विपक्षीय अन्य प्रदेशके सीमान्तके नगरोंके और जनपदोंके अधिकारियोंसे दूत सौहार्द रखते थे। विपक्षके, दुर्ग, शस्त्र अवस्थान, गुप्तास्त्र, आक्रमणीय और अनाक्रमणीय स्थान-समूहकी खबर दूत लेते रहते थे और स्वपक्षके अस्त्र, दुर्गादिके साथ उनकी तुलना करके अवस्थाके गुरुत्वकी विवेचना करते थे। साङ्केतिक लिखन और कबूतरोंके दौत्यका प्रचलन था, ऐसा प्रतीत होता है।

समस्त सम्पत्तिका अधिकारी राजा हैं, इस धारणासे कर आदाय किया जाता था। और यही राजाका प्रधान अवलम्बन था। साधारण उत्पन्न द्रव्यकी एक चौथाई ली जाती थी।

अकबर $\frac{1}{2}$ और काश्मीर नरेश $\frac{1}{3}$ लेते थे लेकिन उस समय $\frac{1}{4}$ लिया जाता था, आवश्यकता पड़नेपर राजा सामरिक कर भी वसूल किया करते थे।

शराब, चमड़ा, सूत, तेल, घी, शक्कर, बाजार, जुआके खेलसे काष्ठ-शिल्प प्रभृतिसे और नागरक, मुद्राध्यक्ष, सुवर्ण वणिक्, तथा देव पूजाध्यक्ष आदिसे कर लिया जाता था।

नाव, जहाज, और गोचर भूमि इत्यादिका भी कर देना पड़ता था। पथकर और वाणिज्य कर प्रभृतिकी भी व्यवस्था थी।

सोना, चांदी, हीरा, मोती, रत्न, प्रवाल, शंख, लोहा, नमक और अन्यान्य खनिज पदार्थों से कर लिया जाता था।

पुष्प कुंज, फलोद्यान और ऊख प्रभृति उत्पादन योग्य आर्द्र भूमिसे कर संगृहीत होता था, मृगया, काष्ठ रक्षा और हाथियोंके रहनेवाले जंगलोंसे कर लिया जाता था। गो, महिष, गधा, ऊंट घोड़ा और खच्चरोंसे भी अर्थ लाभ होता था।

मुद्राध्यक्ष।

मुद्राध्यक्ष प्रति मुद्रामें एक माशा मात्र लेकर सार्टीफिकेट देदे, ऐसा नियम था। पासपोर्टके बिना कोई न तो देशमें प्रविष्ट ही होने पाता था, और न देशके बाहर ही जा सकता था। अगर कोई इस नियमका उल्लंघन करता था, तो, पकड़े जानेपर उसे गुरुतर दण्ड दिया जाता था। गो चरण भूमिका अध्यक्ष

पासपोटाकी परीक्षा करता था। शत्रु अथवा असभ्य जाति का यातायात सवाद् राजकोय कबूतरों द्वारा भेजा जाता था।

जल।

जल निकलने और जल आनेके लिये भार प्राप्त कर्मचारी थे। वे लोग नहरें और तालाब इत्यादि खोदवाते थे, और जल-कर (Water tax) वसूल करते थे।

मार्ग।

मुख्य मुख्य सड़कोंके परिदर्शनके लिए कर्मचारी नियुक्त थे। २८८१$\frac{१}{२}$ गजके अन्तरसे दूरत्व सूचक प्रस्तर फलक प्रोथित थे। आधुनिक ग्रैंड ट्रंक रोड (Grand Trunk Road) उस समय पाटलिपुत्र और तक्षशिलाके बीचमें विस्तृत था।

शराब।

शराबसे कर वसूल किया जाता था। अनुमति या लाइसेन्स (License) का बन्दोबस्त था। इसको 'निसृष्टि' कहते थे। समग्र विभाग पुलिसकी सहायतासे एक अध्यक्ष (Superintendent) द्वारा सचालित होता था। दुकानोंमें खरीदारोंके आकर्षणके लिये आसन, सुगन्धित द्रव्य, माल्य और जल, इत्यादि की व्यवस्था की जाती थी। किसी उत्सवके उपलक्षमें ४ दिनके लिए शराब बनानेकी विशेष अनुज्ञा दी जाती थी।

भू सम्पत्ति।

अर्थ शास्त्रकारका कथन है कि, सभी शास्त्र वेत्ता यह स्वीकार करते हैं कि, जल और स्थलका अधिकारी राजा है। इन दो को छोड़कर अन्यान्य द्रव्योंका अधिकारी प्रजा वर्ग हो सकता है। वे और भी कहते हैं कि, "कर-देनेवालोंको खेतीके लिए जमीनका एक पुरुषसे अधिक अधिकार दिया जाना चाहिए। और जो खेती न करता हो, उसकी जमीन जब्त करके दूसरेको दी जा सकती है। जमींदार किसी तरहका लगान न पाते थे।

भूमि विभाग।

राजा गोचारणके लिए विना जोती हुई जमीनका इन्तजाम करते थे। ब्राह्मणोंको तपस्याके लिए, अरण्य और सोम-लता रोपणके लिए तपोवन देना पड़ता था। राजाके शिकार करनेके लिए सिर्फ एक द्वार युक्त, परिखा-वेष्टित, फल पुष्प और कंटक हीन गुल्म शोभित कानन भूमि निर्दिष्ट रहती। वह अहिंस्र जन्तु, वृहत् तालाब, नख दन्त विहीन बाघ, हाथी, मृग, मोर महिष प्रभृति पशुओं द्वारा पूर्ण रहती थी।

और व्यवस्थाके अर्थशास्त्रकारके शब्दोंमें ही सुनिए। "ऋत्विक आचार्य, पुरोहित और श्रोत्रियोंको उपजाऊ जमीन प्रदान करना चाहिए। और उन लोगोंको कर तथा दण्ड आदिसे मुक्ति देना चाहिए। अध्यक्ष, हिसाब किताब रखनेवाले गोप, स्थानिक, पशु चिकित्सक, अश्वचिकित्सक, नरचिकित्सक और दूत-गणको भी भूमिदान करना चाहिये। इस जमीनको वे लोग बेंचकर अथवा

गिरवी रखकर हस्तान्तर न कर सकेंगे। लगान लेकर खेतीके लिए जमीन जीवनोत पर्यन्त देना चाहिए। जो जमीन खाज बोने लायक नहीं हुई है, उसको जो लोग जोतने हैं, उनसे कर ग्रहण न किया जायगा।"

प्रजा-पालन।

प्रजारंजन ही राजाका प्रधान कर्त्तव्य माना जाता था। अर्थशास्त्रमें प्रजापालन और प्रजारंजनके अनेक उपाय निर्दिष्ट किए गये हैं। शिल्प वाणिज्यकी उन्नतिके लिये उत्साहदान और विचार शील व्यक्तियोंके सुख स्वाच्छन्दयके प्रति विशेष दृष्टि रखनेकी व्यवस्था थी। पशु और वाणिज्यकी वृद्धि, जल मार्ग और स्थल-मार्गमें वाणिज्यको सुविधाके लिए पण्य पत्तन और सड़कोंका निर्माण, तालाबोंकी सृष्टि, कुञ्ज निर्माण, चोरों और हिंस्र जन्तुओंका दूरीकरण, आश्रय गृह निर्माण, सड़कोंका सुधार गो रक्षण, जंगली चीजोंसे पण्य प्रस्तुत करनेके लिये शिल्पागारोंका स्थापन, लड़के, बूढ़े, रोगी, विकलांग अनाथ, निराश्रया स्त्री, और उन लोगोंकी सन्तान सन्ततिको आश्रय प्रदानकी बड़ी सुन्दर व्यवस्था थी। पुस्तककी वृद्धिके भयसे अर्थशास्त्रका बातोंका उद्धरण देकर उनकी व्याख्या न की जा सकी।

समवाय—शक्तिबलसे—आधुनिक कंपनियोंकी तरह—प्रजा वर्ग यदि अपनी उन्नतिके लिये चेष्टा करते थे, तो राज्यकी ओरसे उनको यथेष्ट प्रोत्साहन दिया जाता था, और आवश्यक सुविधायें प्रदान की जाती थीं। स्त्री और पुत्रोंकी भरण पोषण की

व्यवस्था किये बिना यदि कोई संन्यास ग्रहण करता था, तो वह दण्डनीय होता था। सर्व साधारणके अहितकर किसी खेल आदिके लिये गावोंमें गृह निर्माण करना निषिद्ध था। सारांश यह कि प्रजा, [illegible], वणिक, और कारीगर आदि सभी प्रकारके लोगोंको जिससे सुविधा हो, उसका पूरा इन्तजाम था।



विष-कन्या।



राक्षस कुछ दिनोंतक पाटलिपुत्रमें ही रहे। और चन्द्रगुप्तका जड़ मूलसे विध्वंस करनेके लिये अनेक षड्यन्त्र करते रहे। लेकिन चाणक्यकी बुद्धिमानीसे उनकी सारी चेष्टाओंपर पानी फिर गया। सब उद्यम निष्फल हुए। अन्तमें राक्षसने चन्द्रगुप्तके पास एक 'विष-कन्या' भेजी। लेकिन किया क्या जाय? उन्होंने करना कुछ चाहा था, और हो गया कुछ और ही। चाणक्यके गुप्तचरोंने उस विषकन्याको पर्वतकके पास पहुंचा दिया।

उस विष-कन्याके साथ सहवास करनेके कारण पर्वतककी मृत्यु हो गई। गुप्तचरोंने चारों ओर यह खबर फैला दी कि, चाणक्यने ही पर्वतककी हत्या की है। वस्तुत यह बात न थी। चाणक्य ब्राह्मण थे, यद्यपि उनके हृदयमें अपने विपक्षियोंके प्रति दयाका लेश भी न था, लेकिन वे अपने हाथसे किसीका संहार न करते थे। पर्वतकके पुत्रका नाम था, मलयकेतु। इसका जिक्र हम पहले कर आये हैं। वे अपने पिताकी इस आकस्मिक मृत्युसे और चरों द्वारा उड़ाई हुई खबरसे चाणक्यको पितृहंता समझ कर उनसे असन्तुष्ट हो गए। उनकी विरक्ति इतनी अधिक थी कि, वे चाणक्यसे बदला लेनेका सुयोग ढूँढने लगे। राक्षसने इस स्वर्ण-सुयोगको हाथसे जाने देना उचित नहीं समझा। वे पाट लिपुत्रसे भागकर मलयकेतुके पास आ पहुँचे। उन्होंने मलय केतुके साथ मैत्री स्थापित कर ली और उसके प्रधानमन्त्री बन गये। अब राक्षसको दिन रात एक मात्र यही चिन्ता रहती थी कि किसी प्रकार चन्द्रगुप्तके स्थानपर मलयकेतु राजा बनाया जाय।

मलयकेतु चन्द्रगुप्तके बड़े मित्र थे, तथापि पितृ हत्याके कारण अब उनसे असन्तुष्ट हो गये थे, और किसी प्रकार पिताकी मृत्यु-का बदला लेना चाहते थे। पूर्ण प्रतिशोध लेना ही उनका एकमात्र लक्ष्य था।

चाणक्य भी शान्त नहीं थे। वे अपने घरमें बैठे हुए सोच रहे थे कि नन्द वंशका ध्वंस तो कर चुका। लेकिन इसो

कारण राक्षस पीछे पड़ा हुआ है। राक्षस नन्द वंशका अनन्य भक्त है। इसलिए वह हमपर बहुत ही बिगड़ा हुआ है। इधर पर्वतकका आकस्मिक मृत्युके कारण मलयकेतु भी उत्तेजित और क्रुद्ध हो गया है। जिस तरह हो, वह पितृहत्याका बदला लेनेकी अवश्य कोशिश करेगा। अफवाह उड़ रही है कि, वह अपनी यहुसंख्यक सैन्य लेकर चन्द्रगुप्तपर हमला करने आ रहा है। मेरी प्रतिज्ञा थी कि, मैं नन्द वंशका समूल ध्वंस करूँगा। ईश्वरकी अपार अनुकम्पासे उस प्रतिज्ञा रूप दुस्तर सागरसे किसी प्रकार उत्तीर्ण हो चुका। क्या उसी प्रकार मैं मलयकेतुके उद्देश्यको नष्ट नहीं कर सकता? क्या उसकी शक्तिको छिन्न भिन्न कर देना असम्भव है?

यद्यपि नन्दवंशके विनाशके साथ साथ मेरा कार्य समाप्त हो चुका है। सिंह जिस प्रकार गजेन्द्रपर आक्रमण करता है, भेदनकर, चीर फाड़कर फेंक देता है उसी प्रकार मैंने भी एक एक करके नव नन्दोंका उच्छेद कर दिया है।

प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके बाद भी मैं जो राज काजमें लिप्त हूँ, वह सिर्फ चन्द्रगुप्तके अनुरोधसे। लेकिन राक्षसको स्वायत्त अवश्य ही करना होगा। वह बहुत ही चतुर और नन्द वंशका एकान्त भक्त है। मलयकेतुके साथ मिलकर वह हम लोगोंको हानि पहुँचानेकी चेष्टा कर रहा है। इस प्रकारके राजानुरक्त और स्वार्थशून्य पुरुष अत्यन्त दुर्लभ हैं। जो हो, सम्पूर्ण

संवाद जाननेके लिए गुप्तचर नियुक्त कर चुका था। देखना है, क्या परिणाम होता है।

चाणक्य बैठे हुए यह सब सोच ही रहे थे कि, अकस्मात् एक आदमी, चित्र लिए हुए उनके घरके सामने आकर गाने लगा। चाणक्यका एक शिष्य उस वक्त वहाँपर उपस्थित था, उसने उस आदमीको घरकी ओर बढ़नेसे रोका। उस आदमीने तेजीसे कहा—'यह तो चाणक्यका घर है? रास्ता छोड़ो, तुम्हारे गुरुदेवको कुछ उपदेश दे आऊँ।"

शिष्यने कहा, "जाओ, आगे मत बढ़ो। तुम गुरुदेवको उपदेश देनेकी स्पर्द्धा करने आये हो? तुम्हें लज्जा नहीं आयी।"

उस व्यक्तिने जरा भी नाराज न होकर कहा, "नाराज क्यों होते हो? नीतिशास्त्र कहता है कि, "नहि सर्व सर्वम् जानाति" मतलब यह कि, सभी सब कुछ थोड़े ही जानते हैं? क्या उपदेशकी जरूरत नहीं है? फिर मैं लज्जित क्यों होऊँ? रास्ता छोड़ दो।"

शिष्यने कहा,—'हाँ, हमारे गुरुदेव सब कुछ जानते हैं।"

उस व्यक्तिने, कहा,—"अच्छा क्या वे यह बतला सकते हैं कि, चन्द्र किसको अप्रिय है?

शिष्यने कहा,—"चल मूर्ख, कहींका, इस मामूली-सी बातको जाननेसे ही क्या और न जाननेसे ही क्या?

उसने जवाब दिया कि, "तुम्हारे गुरुदेव इसे सुनते ही समझ सकेंगे। तुम भी समझ रक्खो कि चन्द्र पद्मको अप्रिय है।" इस बात चीतका प्रत्येक वर्ण चाणक्यके कानोंमें पहुँच रहा था।

बातचीतके खतम हो जानेके बाद, उन्होंने समझ लिया कि, चन्द्रगुप्त जिन लोगोंके विराग भाजन हैं, यह मनुष्य उनलोगोंका पता जानता है। तत्काल ही उन्होंने उस व्यक्तिको बुला लिया। वह चाणक्यके मकानके अन्दर पहुँच गया, चाणक्यने उसे अच्छी तरह देखते ही पहचान लिया। यह उन्हींका नियुक्त किया हुआ एक गुप्तचर था। उन्होंने पूछा, "अच्छा, बतलाओ तो, पाटलिपुत्रमें चन्द्रगुप्तका विरोधी कौन कौन है?" जासूसने कहा, "पहला आदमी है, जीवसिद्धि। चन्द्रगुप्तका वध करनेके लिये राक्षसने जो विष कन्या भेजी थी जीवसिद्धि ही उसे पर्वतकके शिविरमें ले गया था और इस कन्याके सहवास करनेके कारण पर्वतककी मृत्यु हो गई।"

"चाणक्य—दूसरा कौन है?

जासूस—"राक्षसका मित्र चन्द्रमास।"

"जिन दो आदमियोंका उल्लेख किया था, ये दोनों ही उन्हींके नियुक्त किये हुए चर थे। जाहिरा तौरपर ये लोग राक्षसके मित्रोंके नामसे मशहूर थे। राक्षसके पास उनका आना-जाना बना रहता था। चाणक्य गुप्तचर नियुक्त करनेमें ऐसे कौशलसे काम लेते थे कि, उन्हींका चर एक दूसरे चरको नहीं पहचान पाता था।

चाणक्यने फिर पूछा, "तीसरा कौन है?"

"जासूस बोला, "तीसरा है, चन्दनदास नामक एक महाजन। राक्षस अपना परिवार उसीके घरमें रखकर बाहर चला गया है।"

चाणक्य—चन्दन दासके घरमें राक्षसका परिवार छिपा हुआ है, यह तुमने कैसे जाना ?

चरने एक अंगूठी चाणक्यके हाथमें देकर कहा, "इसे देखते ही आप सब कुछ समझ जायेंगे।"

चाणक्यने अंगूठीको अच्छी तरह देख भाल कर फिर पूछा, "तुमने इसे कैसे पाया ?" चरने कहा, यह चित्र, जो आप मेरे हाथमें देख रहे हैं न, इसे लेकर मैं गाता हुआ किसी तरह चन्दन दासके घरमें घुस गया। वहाँ देखा कि, एक छोटा सा लड़का एक दरवाजेसे बाहर निकल रहा था, उसी समय एक स्त्रीने हाथसे उसे बाहरसे जानेसे रोका और फिर उसे घरके भीतर खींच लिया। ठीक इसी समय उस महिलाके हाथसे अंगूठी निकलकर नीचे गिर पड़ी। लेकिन कार्यमें व्यस्त होनेके कारण वे यह जान न सकी थीं। अंगूठीमें राक्षसका नाम लिखा हुआ था, अतएव मैंने यह समझ लिया कि यही रमणी राक्षसकी धर्मपत्नी है।"

चाणक्यने उस चरसे बैठनेको कहा, और स्वयं पत्र लिखने लगे। इसी समय द्रुत-गतिसे आकर और चाणक्यको प्रणाम कर एक आदमीने कहा—"महाराज चन्द्रगुप्त अपने सम्पूर्ण स्वर्णाभरण ब्राह्मणोंको दान देना चाहते हैं।" चाणक्यने कहा, "जिन ब्राह्मणोंको दान देना होगा, उनका नाम बतलाये देता हूँ, लेकिन दान लेकर लौटते समय हर एक आदमीको हमसे मिलकर जाना चाहिए। आगामी कल दानका दिन निर्द्धारित होना चाहिए।" यह कहकर वे सिद्धार्थकको कुछ देर अपेक्षा

करनेके लिए कहकर पत्र लिखने लगे। चन्द्रभासको आनेके लिए लिखा गया। लेकिन किसने लिखा, और यहाँसे लिखा, इस बातका जिक्र उस पत्रभरमें कहीं नहीं था। उसके नीचे राक्षसकी अगूठोकी छाप देदी गई। पत्रको सिद्धार्थकके हाथमें देकर चाणक्यने कहा कि, "मेरी आज्ञासे चन्द्रभासको मारनेके लिए वध्य भूमि ले जाया जायगा। तब तुम घातकोंको इशारेसे हट जानेके लिये कहना, और उन लोगोंको खूब धमकाना। उन लोगों को हटा कर तुम किसी तरह चन्द्रभासको लेकर राक्षसके निकट पहुंचा जाना। चन्द्रभास राक्षसका प्राणप्रिय मित्र है। वह तुम्हारे इस कार्यसे सन्तुष्ट होकर तुम्हें निश्चय ही पुरस्कृत करेगा। तुम भी कृतज्ञता प्रदर्शित करके वहीं रहना। इसके बाद जो कुछ करना होगा, वह अभी बतलाता हूं।" इसके बाद उन्होंने अपने शिष्यको बुलाकर कहा,—"जल्लादोंसे कह दो, कि महाराज चन्द्रगुप्तकी आज्ञा है कि, जीव सिद्धिको अपमानित कर नगरसे बाहर निकाल दो। कारण उसने विष कन्याको पर्वतकके पास ले जाकर उनकी हत्या की है। चंद्रभास हम लोगोंका अकल्याण चाहता है, इसलिये उसे कैद करके शूली दे दी जानी चाहिए।"

इसके बाद सिद्धार्थक चाणक्यसे अन्य आवश्यक उपदेश लेकर चला गया।

तदनन्तर चाणक्यने चंदनदासको बुला भेजा। चाणक्यका नाम सुनकर उनके मित्र भी शंकित हो जाते थे फिर चन्दनदास

तो राक्षसके मित्रोंमेंसे थे। उनका हृदय चाणक्यके आह्वानसे कम्पित हो उठा। मुँहका रंग फीका पड़ गया। खैर, किसी तरह अपनेको सम्भाल कर वे चाणक्यके भवनमें पहुँच गये। चाणक्यने बड़े आदरके साथ उनसे बैठनेको कहा। चन्दनदासने समझ लिया कि, जिस प्रकार शिकार करनेके पहले शिकारी मृगोंको प्रलुब्ध करनेके लिए मधुर अलापचारी करता है, उसी प्रकार यह मेरा आदर कर रहे हैं। निश्चय ही ये मुझसे कुछ काम लेना चाहते हैं। लेकिन अपने मनोभावोंको छिपाकर उन्होंने चाणक्यसे नम्रता पूर्वक कहा,—"मैं आपके सम्मुख बैठने योग्य नहीं हूं।" इसके बाद चाणक्यने विशेष आग्रहके साथ अनुरोध किया, लाचार होकर चन्दनदास बैठ गए लेकिन उद्विग्न चित्तसे आगामी विपत्तिकी सम्भावनाकी चिन्ता करने लगे।

चन्दनदास पाटलिपुत्रके प्रधान महाजन [redacted]। चाणक्यने उनसे पहले ही पूछा कि, आजकल वाणिज्य व्यवसायकी कैसी अवस्था है? चन्दनदासने गम्भीर स्वरसे कहा "अच्छी ही है।" इसके बाद चाणक्यने पूछा कि, चन्द्रगुप्तके शासनमें उन्हें किसी प्रकार की असुविधा तो नहीं है। इसके उत्तरमें चन्दनदासने व्यग्र भावसे कहा कि, नहीं, नहीं, मुझे किसी प्रकारकी असुविधा नहीं है। हमलोग बड़े मजेमें हैं।

चाणक्यने कहा कि, किसी राजाके राज्य कालमें प्रजा-गण यदि सुखी हों, सन्तुष्ट हों, उन्हें सर्वथा आराम पहुँचानेका

राज्यकी ओरसे प्रबंध किया जाता हो, तो क्या प्रजाजनोंको राजाका विद्रोही होना उचित है? चन्दनदासने अपनी असम्मति प्रदान की। उन्होंने पूछा कि, क्यों, आप किसको विद्रोही समझते हैं? चाणक्यने दृढ़ स्वरसे कहा, 'तुम्हें।" विस्मितोंकी तरह चन्दनदासने कहा, "मुझे! कैसे?'

चाणक्यने कहा, "हां, मेरे पास इसका प्रबल प्रमाण मौजूद है। तुमने राज विद्रोही, चन्द्रगुप्तके शत्रु, राक्षसकी पत्नीको अपने घरमें छिपा रक्खा है।" चन्दनदासने सिर हिलाकर अस्वीकार किया, और कहा—"सम्भवतः आपको किसीने झूठी खबर दी है। सम्भवतः खबर देनेवाला इस सम्बन्धमें बहुत थोड़ा जानता है। यह सन्देह सर्वथा मिथ्या है।" चाणक्यने कहा, "तुम शंकित क्यों हो रहे हो? सत्य बात कहनेमें डरनेकी जरूरत नहीं है। मिथ्या भाषण करना अधर्म है।" चन्दनदास अपनी बातपर पूर्ववत् अटल रहे, बोले, "हाँ, यह बात सत्य है। लेकिन राक्षसकी धर्मपत्नी यद्यपि किसी समय हमारे यहाँ थीं, लेकिन अब नहीं हैं।" चाणक्यने गर्म होकर कहा, 'अभी अभी आप कह चुके हैं, कि मेरे यहाँ नहीं थीं, और अब कह रहे हैं, मेरे यहाँ थीं, लेकिन इस समय नहीं हैं। यह कैसी बात है? यदि आप मेरे साथ छल प्रपंच करना चाहते हैं, तो आपके पक्षमें इसका परिणाम मंगल-जनक नहीं होगा। आप समझ लीजिए, कि आप अपने ही हाथोंसे अपने मार्गमें काँटे बिखेर रहे हैं। मिथ्या व्यवहारका फल आपके लिए भयानक होगा।"

चन्दनदास इस बातसे तनिक भी भीत नहीं हुए, बोले,—"कह तो चुका हूँ, किसी समय हमारे यहाँ थीं, लेकिन अब मौजूद नहीं हैं।" चाणक्यने फिर पूछा, "अच्छा, इस समय वे कहाँ हैं?"

चन्दनदासने कहा, "मालूम नहीं।" चाणक्यने और भी क्रुद्ध होकर कहा, "झूठ बात। चन्दनदास, क्या तुम्हारे हृदयमें जरा भी भय नहीं है? जिस चाणक्यने चुटकी बजाकर नन्द वंशका ध्वंस कर दिया है, उसके सामने मिथ्या भाषण? जानते नहीं हो, कि मेरी क्रोधाग्निको निर्वापित कर सके, ऐसा व्यक्ति संसारमें नहीं है। जबतक मैं जीवित हूं, तबतक चन्द्रगुप्तको कोई सिंहासन च्युत नहीं कर सकता। उसे जरा भर नुकसान पहुँचा सके, ऐसी क्षमता, ऐसा दुस्साहस किसीमें नहीं है।"

इस समय बाहरसे बड़े जोरसे कोलाहल सुनाई पड़ा। चाणक्यने अपने शिष्य शाङ्गरवसे कहा, "बेटा, देखो तो कहाँ यह शोर हो रहा है?" शिष्यने लौटकर जवाब दिया कि मगध नरेश चन्द्रगुप्तकी आज्ञासे जीव सिद्धिको अपमानित करके नगरसे निर्वासित किया जा रहा है।"

चाणक्यने कहा, "अन्यायियोंको इसी प्रकार कठोर दण्ड देना चाहिए।" इसके बाद चन्दनदाससे बोले "चन्दनदास, तुम्हें मैं अब भी वह मार्ग सुझा रहा हूं, वह उपदेश दे रहा हूं, जिसपर चलनेसे—जिसका अनुसरण करनेसे तुम्हारा भला होगा। तुम सभी घटना बतलाकर राजाका अनुग्रह पानेकी चेष्टा करो।"

इसी समय फिर बाहर कल रव सुना गया। चाणक्यने फिर अपने शिष्यसे इस कोलाहलका कारण पूछा, तो पता लगा कि, चन्दनदास नामक एक ब्राह्मणको शूली देनेके लिए वध्य भूमि ले जाया जा रहा है। चाणक्यने चन्दनदाससे इन कठोर दण्डोंकी बातोंकी विवेचना करके प्राण रक्षाकी चेष्टा करनेके लिये कहा। चन्दनदासने अपने कलेजेको मजबूत करके कहा, "चन्दनदास कायर नहीं है। आप क्यों उसे व्यय ही भय-प्रदर्शन कर रहे हैं। मेरे घरमें राक्षसकी पत्नी नहीं है मैं उसे कहाँसे लाकर आपको दूँ? अगर मेरे घरमें वह होती तो प्राण जानेपर भी मैं कदापि आपको समर्पण न करता।"

चाणक्यने कहा,—"क्या तुम्हारा यही अन्तिम निश्चय है?"

चन्दनदास बोले,—"हाँ?"

चाणक्य चन्दनदासकी तेजस्विता देखकर मुग्ध हो गये। तथापि बोले,—"यही तुम्हारा स्थिर सकल्प है?"

चन्दनदासने दृढ़तासे कहा,—"हाँ।"

चाणक्यने अपने शिष्यको बुलाकर कहा, "सेनापतियोंसे कहो कि, चाणक्यकी आज्ञासे इस दुष्ट वणिककी सब सम्पत्ति लूट लो और सपरिवार इसको कैद कर लो। मैं चन्द्रगुप्तसे इसे प्राण दण्ड देनेको कहूगा।"

चंदनदासपर इस धमकीका कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वे निर्जीव पाषाण प्रतिमाकी भांति नीरव रहे। उनके निश्चयमें जरा भी फर्क न आया। उन्होंने सोचा कि, धर्मके लिए, मित्रके लिए

और असहायके लिए मृत्युका अंगोकार करना बुरा नहीं हैं। मृत्यु तो अवश्यम्भावी है हो। लेकिन इस प्रकारकी मृत्युमे गौरव है। आनन्द हैं। मरनेका इससे बढ़िया अवसर और कौन मिलेगा ?

चाणक्यकी आज्ञानुसार उनका शिष्य चंदनदासको था,र ले गया। चाणक्य प्रसन्न हो गये। उन्होंने सोचा, "चदनदास जिस प्रकार राक्षसके लिए प्राण दण्ड पर्यंन्त स्वीकार कर लेनेको प्रस्तुत है, राक्षस भी वैसे ही प्रिय बधुकी मृत्युके समय अवश्य आयेगा। वह मा मित्र .ी प्राण क्षाको चेष्टा करेगा। उस समय हम अनायास ही राक्षसको अपने हाथमें कर सकेंगे।

चाणक्यका एक एक कौशल, राजनीतिक चाल एक विशाल रहस्य होती थी। उनके मनोगत अभिप्रायको—उनके षडयन्त्रको जाननेका कोई साधन नहीं था। चदनदासको उन्होंने इतना डर दिखलाया था, लेकिन वह भी मौखिक भय मात्र था।

फिर बड़ा शोर गुल सुना गया ? किसका ? सिद्धार्थक चन्द्रमासको लेकर भाग गया था।

चाणक्यने मनही मन कहा, 'ओहो ! मेरे आदेशके अनुसार ही काम हो रहा है।" प्रकट रूपमें शिष्यसे कहा, "ओह ! यह क्या हुआ ?"

भागुरायणसे कहो कि, तुरन्त उन भागे हुए अपराधियोंको पकड़ लाये। शिष्यने कहा, "वह भी भाग गया है। चाणक्यने कहा, गजब हो गया वह भी भाग खड़ा हुआ ? सैनिकोंको

राक्षसने कहा, "कुमार मलयकेतुसे कहना कि, जबतक मैं नन्दराज्यका उद्धार करके शत्रुओंको उनके कर्मों का उचित प्रतिफल न दे सकूँगा, तबतक मैं किसी भी आभूषणका परिधान न करूँगा।" लेकिन प्रहरीके बहुत अनुरोध उपरोध करनेपर राक्षसको अलंकार पहिनने पड़े।

बाहर एक मदारी खड़ा हुआ है। सुनकर राक्षसने अपने भृत्यसे कहा कि, उसे कुछ पैसे देकर विदा करो। लेकिन जब भृत्य मदारीको पैसे देने लगा तब उसने कहा कि, मैं सिर्फ मदारी ही नहीं, कवि भी हूं। साथ ही साथ उसने राक्षसके नाम एक पत्र भी भेजा। राक्षसने उस पत्रको पढ़कर देखा। उसमें कविता द्वारा यह भाव प्रकाशित किया गया था कि, भौंरा फूलोंके रसके पान करनेके बाद जो कुछ उद्गीरण कर देता है, उससे दूसरेका उपकार होता है। राक्षसने समझ लिया कि, यह मदारी उन्हींका नियुक्त किया हुआ एक गुप्तचर है। उन्होंने उसे अन्दर बुला भेजा। जब वह वहाँपर आ गया, तब दूसरोंसे उन्होंने वहाँसे हट जानेको कहा। इसके बाद उस चरसे पूछा, "विराध गुप्त, पाटलिपुत्रका क्या समाचार है।" विराध गुप्तने बतलाया कि, खबर अच्छी नहीं है। लेकिन राक्षसको इस सूत्र वाक्यसे सन्तोष न हुआ, और उन्होंने वहाँका विस्तृत हाल जाननेकी इच्छा प्रकट की। विराध गुप्तने कहा कि, "पर्वतकको मृत्युके बाद जब मलयकेतु भीत होकर भाग गया, तब चाणक्यने हुक्म जारी किया कि, चन्द्रगुप्त आज ही आधी रातके समयमें नन्द राज्यके प्रासादमें

प्रविष्ट होंगे। उन्होंने पहरुयोंसे कह दिया कि, वे लोग पहले द्वारसे लेकर आखिरी दरवाजे तक सजा रक्खे। पहरुयोंने कहा कि, चन्द्रगुप्तका राज प्रासादमें प्रवेश करनेकी खबर पाकर दारुवर्माने प्रथम तोरण द्वार सुसज्जित कर रक्खा है। चाणक्यने प्रसन्नता पूर्वक कहा, "दारुवर्माको उपयुक्त पुरस्कार दिया जायगा।"

राक्षसने कहा, "दारुवर्माने पहले ही कार्य कर रक्खा था, अतएव उसपर चाणक्यकी सन्देह दृष्टिका होना स्वाभाविक ही है। जो हो, इसके बाद क्या हुआ?"

विराधगुप्तने कहा कि, "पर्वतकके भाई विरोचनको चन्द्र गुप्तके साथ बिठलाकर पूर्व प्रतिज्ञाके अनुसार चाणक्यने राज्यके दो भाग कर दिये, इसके बाद रातमें चन्द्रगुप्तका खून करनेके लिए जो समस्त आयोजन किये गये थे, उससे विरोचन की ही मृत्यु हो गई। कारण चाणक्यने उसे पहले ही महलमें प्रविष्ट कराया था। साथ ही साथ दारुवर्माको भी प्राण खो देना पड़ा।"

राक्षसने पूछा, "हमारे वैद्यराज अभयदत्तने क्या किया! चन्द्रगुप्तका क्या हुआ?

विराध गुप्तने कहा, "उन्होंने औषधमें विष मिलाकर स्वर्ण पात्रमें सेवन करनेको दिया था, चाणक्यने स्वर्ण पात्रमें औषधका रंग बदलते देखकर कहा, इसमें जरूर जहर मिला हुआ है। तब चाणक्यने अभयदत्तको वह औषध पीनेके लिए मजबूर किया। परिणाम स्वरूप अभयदत्तको अपने प्राणोंसे हाथ धोना पड़ा।"

राक्षस व्यग्र भावसे बोल उठे,—"सर्वनाश ! फिर ! प्रमोदक-का क्या हुआ ?"

विराधगुप्तने कहा,—"उसे भी मृत्युको आलिङ्गन करना" पड़ा।

राक्षसने पूछा, "किस प्रकार ?

विराधगुप्त बोले,—' सुनिये, आपके दिये हुए धनको पाकर वह पाटलिपुत्रमें बड़े ठाट-बाटसे रहने लगा, चाणक्यको उसपर सन्देह हुआ, और उनकी आज्ञानुसार प्रमोदककी हत्या कर डाली गई ?"

राक्षसने हताशभावसे कहा,—"मेरे तो सभी उद्योग निष्फल हो गये। चन्द्रगुप्तको निद्रित अवस्थामें मारनेके लिए जिन दूतोंको नियुक्त किया था, उनलोगोंकी क्या दशा हुई ?"

इसके उत्तरमें विराधगुप्तने बतलाया, "हत्या-कारियोंने राज-महल—चन्द्रगुप्तके शयनागारके नीचे जो सुरंग खोद रक्खी थी, उसे चाणक्यने चन्द्रगुप्तके सोनेको जानेके पहले ही देख रक्खा। उन्होंने देखा कि, शयनगृहमें सुरंगके रास्ते कुछ चींटियां चावलके कण लिए हुए यातायात कर रही हैं। इसे देखते ही चाणक्यने समझ लिया कि, इस सुरंगमें अवश्य ही मनुष्य छिपे हुए हैं। बस तुरत उस घरमें अग्नि संयोग करनेकी आज्ञा देदी। आगने सब स्वाहा कर दिया, धुएं के कारण आपके अनुचरोंको भागनेका भी मौका न मिला। वे सबके सब उसी आगमें जलकर भस्म हो गये।"

राक्षस विस्मयसे निर्वाक् हो गए। उनकी इन्द्रियाँ जैसे शिथिल हो गई हों। कुछ देरतक नीरव रहनेके बाद उन्होंने कहा कि, "चन्द्रगुप्तके अमङ्गलके लिए जितने अनुष्ठान करता हूँ, उसके सौभाग्यसे वे सब उसके कल्याणकारक होते जाते हैं।"

विराधगुप्तने राक्षसको उत्साहित करनेके अभिप्रायसे कहा कि, जिस कार्यमें प्रवृत्त हुए हैं, उसे समाप्त करना ही होगा। चाणक्यने बहुत सतर्कता अवलम्बन कर रक्खी है। राज्यमें जो लोग अबतक नन्दके प्रति अनुरक्त हैं, ढूँढ ढूँढकर उन्हें कठोर दण्ड दिया जा रहा है। जीव सिद्धिको नगरसे वितारित किया जा चुका है। चन्द्रगुप्तके हत्याकारियोंके साथ चन्द्रभास सम्मिलित हैं, इस खबरको उडाकर उनको शूली देनेकी व्यवस्था की गई है।

राक्षसने फिर पूछा, और किसीका तो कुछ अनिष्ट नहीं हुआ? विराधगुप्त—चाणक्यने चन्दनदाससे आपके परिवारका पता जानना चाहा था, लेकिन उन्होंने अस्वीकार किया। नाराज होकर चाणक्यने अपने सैनिकोंको आज्ञा दी कि, सर्वस्व लूट लो, और इसको सपरिवार कैद करके कारागारमें रक्खो। —उनकी आज्ञानुसार वे कारागारमें पडे अपने दिन काट रहे हैं।"

यह बातचीत हो रही थी कि, एक पहरेदारने आकर कहा कि "चन्द्रभास आये हुए हैं।"

सहसा उस आगमन संवादको सुनकर राक्षस और विराध गुप्त दोनों बडे विस्मित हुए। राक्षसकी आज्ञासे चन्द्रभास भवनके अन्दर प्रविष्ट हुए। उनके साथ साथ सिद्धार्थकने भी

प्रवेश किया। राक्षसने अभी अभी कुछ देर पहले सुना था कि, "चन्द्रभासको शूलीको व्यवस्था की गई हैं, और अब उनको सकुशल उपस्थित देख रहे हैं। राक्षस और विराधगुप्त दोनोंने उनका बड़े प्रेमसे आलिंगन करके कहा, "तुम किस प्रकार वहाँसे जीते जागते आगए ?"

चन्द्रभासने सिद्धार्थककी ओर संकेत करके कहा, "इन्होंने हमारी प्राण रक्षा की है।"

राक्षस सिद्धार्थकपर बड़े प्रसन्न हुए और अपनी देहसे स्वर्णालंकारोंको उन्मोचन करके उन्हें पुरस्कार दिया। सिद्धार्थकने विनय पूर्वक कहा, "ये आभूषण बहुत ही मूल्यवान् हैं, मैं इन्हें कहाँ रक्खूँगा ? जब मुझे जरुरत पड़ेगी, आपसे माँग लूँगा। अभी आप इनको अपने पास रहने दीजिए।" इसके बाद राक्षसने सिद्धार्थककी अंगूठीकी छाप लेना चाहा। सिद्धार्थकने अपनी उंगलीसे अँगूठी खोलकर उन्हें दे दी। चन्द्रभासने अँगूठीको देखकर विस्मित होकर कहा,—"क्या आश्चर्य है, इसमें तो मन्त्रि प्रवर राक्षसका ही नाम खुदा हुआ है।"

राक्षसने भी अंगूठीपर अपने नामको देखकर विस्मित होकर पूछा, "तुमने इसे कहाँ पाया ?"

सिद्धार्थकने कहा, "चन्दनदास नामक एक वणिकके मकानके सम्मुख मैंने इसे पड़ा पाया है।"

राक्षसने कहा, "बड़े आदमी हैं, कितनी ही मूल्यवान् चीजें इधर उधर बिखरी हुई पड़ी रहती हैं।

चन्द्रभासने सिद्धार्थकसे कहा,—"इस अंगूठीपर मन्त्रीका नाम अंकित है, अतएव इसे तुम इनको वापस कर दो। तुम्हें उपयुक्त मूल्य दिया जायगा।" सिद्धार्थकने आह्लादके साथ यह बात स्वीकृत कर ली।

अनन्तर सिद्धार्थकने कहा,—"मैं एक बात कहना चाहता हूं, मैं जिस प्रकार चन्द्रभासको जल्लादोंसे छुड़ाकर भगा लाया हूं, उससे चाणक्य अवश्य ही मुझपर विशेष क्रुद्ध होंगे। अतएव अब मेरा पाटलिपुत्र वापस जाना असम्भव है। मैं आपका आश्रित रहकर और आपकी सेवा करके यहीं रहना चाहता हूं।"

राक्षसने हृष्ट चित्तसे इस प्रस्तावमें सम्मति दी। बादको उन्होंने सबसे प्रस्थान करनेके लिए कहा। सब लोग उठकर अपने स्थानपर चले गये। सिर्फ विराधगुप्त राक्षसके पास रह गये। राक्षस और विराधगुप्तकी फिर पहले जैसी बात चीत होने लगी।

विराधगुप्तने कहा, "खबर है कि, चन्द्रगुप्त चाणक्यपर इस समय बहुत ही रुष्ट हैं और चाणक्य भी चन्द्रगुप्तकी इस क्षमता प्रियताको बहुत ही नापसन्द करते हैं, और चन्द्रगुप्तको अनेक प्रकारसे अपमानित करनेकी चेष्टा किया करते हैं। परिणाम स्वरूप दोनों ओरसे वैमनस्यकी वृद्धि बढ़ती जाती है, अब पहले जैसा गुरु शिष्यभाव दोनोंमें नहीं रह गया है। प्रेम विरोधमें बदल गया है, और प्रीति सम्बन्ध शत्रुतामें। आशा नहीं है, कि दोनोंमें फिर सौहार्द बढ़े, अतएव आपके लिए यह विधि-प्रदत्त अपूर्व सुयोग उपस्थित है। आप इससे यथेच्छ लाभ उठा सकते हैं।"

राक्षसने प्रसन्न होकर कहा,—"तुम मदारीके रूपमें एक बार और पाटलिपुत्र जाओ। वहाँपर मेरे नियुक्त किये हुए कितने ही गुप्तचर हैं। वे लोग नाच गाकर इधर उधर घूमते हैं, और खूब खबरदारी रखते हैं। उन लोगोंसे कह देना कि, चन्द्रगुप्त, चाणक्यपर जब अत्यधिक रुष्ट हों, उस समय वे लोग चन्द्रगुप्तका खूब गुण कीर्त्तन करते रहें, जिससे चन्द्रगुप्त चाणक्यपर और भी अधिक असन्तुष्ट हो जाँय। ऐसा उत्तम अवसर हमलोगोंको बार बार नहीं मिलेगा। खूब सतर्कताके साथ इस बार काम करना होगा।"

विराधगुप्तने प्रतिज्ञाकी कि, मैं आपकी आज्ञानुसार अवश्य ही कार्य करूंगा। उन्होंने यह कहकर पाटलिपुत्रके लिए प्रस्थान किया। उनके जानेके बाद एक सेवकने आकर और राक्षसके हाथमें ३ गहने देकर कहा कि यह बिक रहे हैं, आप जरा इन्हें देखिए तो।

राक्षसने देखा कि आभूषण बेशकीमती हैं। अत यथा योग्य मूल्य देकर उन्हें खरीद लेनेकी सलाह देदी।





चाणक्य-चन्द्रगुप्त-विरोध।

स्वच्छ निर्मल आकाशमें आनन्द गान करती हुई शरत् आ गई। सरोवर अनाविल जलसे परिपूर्ण लहरा रहे हैं, खिले हुए कमलोंसे उनकी शोभा चौगुनी बढ़ गई है। नीचे निर्मल, स्फटिककी भांति स्वच्छ-जल, ऊपर कमल नालपर हरे हरे पत्ते, उसपर प्रस्फुटित रक्त कमल, और खिले हुए कमलोंपर रस लोलुप, कृष्णवर्ण मधुकर श्रेणीका गुञ्जार शारद श्रीका यश विस्तार कर रहा था। हर सिंगारके पुष्पोंसे आच्छादित उद्यान समूह, मानों शरद्के आगमनके कारण निहँस रहे थे। भुवन भास्कर महाराजने अपनी किरणोंसे पृथ्वीकी कीचको इस तरह सुखा दिया था, जैसे सन्तोषका उदय लोभ को? नदियां कल-ध्वनि करती हुई प्रवाहित होकर शरद्का गुण-गान उसी तरह कर रही थीं, जिस प्रकार वन्दीजन राजाओंका। राज-हंस स्वच्छ सरोवरोंके किनारे विचर रहे थे। संसार एक नवीन आलोकसे उद्भासित हो रहा था। मनुष्योंके हृदय नूतन आनन्दसे प्रफुल्लित हो रहे थे। ऐसे

इस कालमें मगध राज चन्द्रगुप्तने आदेश दिया कि, "शरद-उत्सव मनाया जायगा। गृह समूह पुष्प पताकाओंसे सुशोभित किए जायँगे। नगरी दीपमालासे प्रदीप्त होगी। जगह जगहपर तोरण आदि निर्माण किये जायें।" इस आज्ञाको सुनकर लोग आनन्दसे उल्लासित हो गए।

इधर महामन्त्री, मनोषी चाणक्यने आज्ञा प्रदान की कि, किसी प्रकारका आमोद उत्सव नहीं मनाया जायगा। साज-बाज करनेकी कोई जरूरत नहीं है। किसके साहस था, जो चाणक्यकी आज्ञा भंग करता।

एक दिन चन्द्रगुप्त नगर भ्रमणके लिए बाहर निकले तो देखा, नगर जैसा पहले था, वैसा ही अब भी है। उसमें रत्ती भर भी परिवर्त्तन नहीं हुआ। उत्सवका—आमोद प्रमोदका कहीं चिन्ह मात्र नहीं है। उन्होंने मनमें सोचा कि, नगर-वासियोंने उनकी आज्ञाको अमान्य किया है। राजा रुक गए, आज्ञा पालन न होते देखकर मिजाज गर्म हो गया। कंचुकीसे उन्होंने इसका कारण पूछा। राजाका क्रोध देखकर कंचुकी कांपने लगा। उसने डरते डरते कहा कि, चाणक्यकी आज्ञासे उत्सव बन्द कर दिया गया है। चन्द्रगुप्तने क्रुद्ध स्वरसे कहा,—"चाणक्यको बुलाओ।" कंचुकी भाग गया।

चाणक्य उस समय राक्षसके उपायोंको विफल करनेकी बातें सोच रहे थे, कंचुकीने वहाँपर उपस्थित होकर चाणक्यको नीरव प्रणाम किया। चाणक्यने कंचुकीकी ओर देखा,

उसका चेहरा शुष्क हो रहा था। चाणक्यने पूछा, "क्या खबर है?"

डरते डरते कंचुकीने कहा, "महाराज आपसे मुलाकात करना चाहते हैं। आप कृपा करके उनसे एक बार मिलने—चलिए।"

चाणक्यने व्यापार समझ लिया, बोले, "मैंने शारद-उत्सव बन्द करनेकी आज्ञा दी है, क्या यह खबर महाराजके कर्ण गोचर हुई है।"

कंचुकी बोला, "हाँ हुई है।"

चाणक्य—"किसने कहा?"

कंचुकीने कहा, "नगरकी अवस्था देखकर वे स्वयं ही समझ गये हैं।" यह कहकर कंचुकी सिर झुका कर खड़ा रहा।

चाणक्य उसके साथ चन्द्रगुप्तके पास गए। उनको आते देखकर चन्द्रगुप्तने सिंहासनसे उतरकर और भूमिस्थ होकर उन्हें प्रणाम किया। चाणक्यने उन्हें आशीर्वाद दिया। चन्द्रगुप्तने चाणक्यको उपयुक्त आसनपर बैठनेका अनुरोध किया। चाणक्यने आसनपर बैठनेके बाद पूछा, "चन्द्रगुप्त, तुमने मुझे बुलाया है?" चन्द्रगुप्तने कहा, "हाँ आपके आनेसे प्रसन्न हुआ।"

चाणक्यने आह्वानका कारण पूछा। चन्द्रगुप्तने कहा, "शारद-उत्सव बन्द करनेसे आपने क्या लाभ सोचा है?"

चाणक्यने कहा, "इसी कारण तिरस्कार करनेके लिए बुलाया है, क्यों?"



चन्द्रगुप्तने कोमल स्वरसे कहा, "जी, नहीं। इस प्रकार उत्सव बन्द करनेके आदेशमें आपका क्या उद्देश्य निहित है, यही प्रष्टव्य है।"

चाणक्यने कहा, "मेरी इच्छा हुई, इसलिए मैंने उत्सव-होना रोक दिया।"

चन्द्रगुप्तने कहा, "इसकी जड़में अवश्य ही कुछ न कुछ गूढ़ रहस्य होगा, अन्यथा, आप बिना कारण—बिना उद्देश्यके कभी कुछ काम नहीं करते।"

चाणक्यने कहा, "यह बात सत्य है, मैं निष्प्रयोजन कोई कार्य नहीं करता।"

चन्द्रगुप्त,—"उस कारणको जाननेके लिए उत्सुक होकर ही मैंने आपका आह्वान किया है। मैं कारण जानकर बड़ा कृतज्ञ होऊँगा।"

चाणक्य,—"इसे जानकर तुम क्या करोगे?"

चन्द्रगुप्तने मनकी विरक्ति मनहीमें रखकर मौनावलम्बन किया। इधर मौका देखकर राक्षसके अनुचरोंने चन्द्रगुप्तका स्तुति पाठ करना प्रारम्भ कर दिया। उस गानका मतलब संक्षेपमें यह है कि, जिसका आदेश उल्लंघन करनेका, जिसकी आज्ञा भंग करनेका दूसरा साहस करता है, जिसके आदेश दूसरेके आदेश के सन्मुख निष्फल हैं, वह दूसरेके हाथकी कठपुतली है। सिंहासनपर बैठनेसे ही वह राजाके नामके योग्य नहीं हो सकता।

चाणक्यको इस बातके समझनेमें जरा भी देर नहीं लगी कि,

ये सब राक्षसके अनुचर हैं, और हमारे विरुद्ध चन्द्रगुप्तको उत्तेजित करनेके लिए प्रेरित किये गये हैं। चन्द्रगुप्तने इन स्तुति पाठकोंको मोहर देकर विदा करनेकी आज्ञा दी। चाणक्यने मना कर दिया। चन्द्रगुप्तने उत्तेजित होकर कहा, "यदि आप मेरे प्रति कार्यमें बाधा उपस्थित करेंगे, तो मेरा प्रभुत्व, मेरा सामर्थ्य तो कहने भरको है। कार्यतः तो मुझे नित्य ही दासत्वकी कठोर शृङ्खलामें बंधकर रहना पड़ता है।"

चाणक्यने कहा, 'तुम अगर मेरे कामोंको असह्य समझते हो, मेरा हस्तक्षेप करना तुम्हें बुरा मालूम होता हो तो, अबसे तुम्हीं राज काज सम्पादन किया करो। मैं बिल्कुल अलग रहा करूँगा।"

चन्द्रगुप्त,—यही सही। लेकिन मेरा प्रश्न तो यह है कि आपने शारदोत्सव क्यों बन्द कर दिया है ?

चाणक्य—मैं तुम्हींसे पूछता हूँ, इसके करनेकी क्या जरूरत थी ?

चन्द्रगुप्त—मेरा उद्देश्य यह है कि सब लोग मेरे आदेशोंका पालन करें।

चाणक्य—और मेरा उद्देश्य है, उसका भंग करना। क्षण भर निस्तब्ध रहकर चाणक्यने कहा, 'मेरे इस प्रकारकी आज्ञा देनेका कारण यह है, कि तुम्हारे प्रधान कर्मचारी गण यहाँसे भाग कर मलयकेतुके साथ मिल गये हैं, किसीने अधिकतर अर्थ लाभकी आशासे, और किसीने अन्य प्रकारके लोभसे तुम्हारा राज्य परित्याग कर दिया है। कितने ही शराबखोर और अकर्मण्य हैं,

उनको मैंने वितांडित कर दिया है। जो लोग तुम्हारे विरोधी हैं, तुम्हारा अनभल चाहते हैं, उन्हें कठोर दण्ड दिया गया है। अपराध करनेपर गुरुतर दण्ड स्वीकार करना पड़ेगा, इस ख्यालसे भी कितने ही भाग गये हैं। तुम्हारे चारों ओर शत्रु हैं। तुम शत्रुओंसे घिरे हुए हो, ये लोग सुयोग पाते ही तुम्हारा सर्वनाश करेंगे। मलयकेतु और सेल्यूकस हमलोगोंके खिलाफ युद्ध करनेको प्रस्तुत हुए हैं। इस समय तुम्हें अपने शत्रुओंको वितांडित करनेके लिए युद्धकी तैयारी करनी होगी, यह क्या उत्सव करनेका समय है?"

चन्द्रगुप्तने कहा, "अच्छा, इसे मैं माने लेता हूं। लेकिन जब सब अनिष्टोंका मूल राक्षस भागा था, तब आपने उसे क्यों नहीं अवरुद्ध किया था? जब वह यहांपर मौजूद था, तब आपने उसे क्यों छोड़ दिया? क्यों आपने उसकी शक्तिकी अवहेलना की? जिन कार्यको बड़ी आसानीसे बिना हाथ पैर हिलाए हुए कर सकते थे, उस कामको क्यों आपने नहीं किया? और आज उसकी भीति दिखलाकर हमें सन्तुष्ट करना चाहते हैं।"

चाणक्यने कहा, "राक्षस बहुत ही बुद्धिमान, क्षमता शाली, सम्पत्ति और सहाय सम्पन्न है। उसपर सभी श्रद्धा और विश्वास करते हैं। अतएव अगर उस वक्त राक्षसको पकड़नेके लिए हमलोग चेष्टा करते, तो हमारी बहुसंख्यक सैन्य विनष्ट होती, प्रजाके विद्रोही हो जानेकी यथेष्ट आशंका थी, और राक्षस जैसा मनुष्य यदि जीता हुआ न पकड़ा जा सकता, तो हमलोगोंकी बहुत

बड़ी क्षति होती, जिसकी पूर्त्ति करना दुष्कर था। उसको मारनेकी अपेक्षा उसको अपने पक्षमें लानेकी चेष्टा करना क्या उचित नहीं है ?"

चन्द्रगुप्त—तो कहना पड़ेगा कि राक्षस ही सर्वथा योग्य और विलक्षण व्यक्ति है।

चाणक्य—और मैं अकर्मण्य और अयोग्य हूं, यही तो प्रकारान्तरसे कहना चाहते हो ? मैंने तुम्हारा कोई उपकार नहीं किया क्यों ? तुम्हें इस सिंहासनपर किसने बैठाया है, कुछ याद है ? तुम्हारे हत-राज्यका उद्धार किसने किया है, कुछ स्मरण आता है ?

चन्द्रगुप्त—इसमें आपके कृतित्व, आपकी विचित्रता और योग्यताका परिचय मिला है ? नन्दोंका दुर्भाग्य था, इसीलिए तो वे लोग सिंहासन खोकर, जीवन खोकर, अपने वंशकी दीप शिखा निर्वापित करनेके लिए बाध्य हुए।

चाणक्य—"मूर्ख ही भाग्यको प्राधान्य दिया करते हैं। मूर्ख ही आत्म शक्तिमें विश्वास नहीं करते। कापुरुष ही सब काम अदृष्टपर, शक्तिपर छोड़ दिया करते हैं।"

चन्द्रगुप्त—और विद्वान् पुरुष ही अहंकार करते हैं, मिथ्या दम्भको प्रश्रय देते हैं, क्यों न ?

चाणक्य—चन्द्रगुप्त जबान सम्भालकर बातें करो। लोग मामूली नौकरोंके प्रति जिस तरहके हीनवाक्योंका प्रयोग करते हैं, तुम भी हमारे प्रति वैसे ही वाक्योंका उच्चारण कर रहे

हो। मेरा सर्वाङ्ग क्रोधसे जला जा रहा है, नन्द-वंशकी रक्त धारासे जिस शिखाको स्नात करके बंधन किया था, आज उसे फिर मुक्त करनेके लिए मेरे हाथ उत्सुक हो रहे हैं। मेरी इच्छा होती है कि, फिर एक बार वैसी ही भीषण प्रतिज्ञा करूं, जिससे सम्पूर्ण विश्व कम्पित हो जाय। नन्द वंशकी शोणित-धारासे जो अग्नि निर्वापित हुई थी, वह फिर विराट् क्षुधाको लेकर दीप्त-शिखा होकर प्रज्वलित हो जायगी। निश्चय समझ लो, चाणक्य इतना और असीम शक्तिमान् है, जो दुनियाको हिला सकता है। चाणक्य दुर्ज्जय अनल-शिखा है, चाणक्य, अपराजेय ब्राह्मण है। राक्षसको ही अगर तुम योग्य समझते हो, तो उसीको लेकर तुम राज्य परिचालन करो। मैं घृणाके साथ मन्त्रित्व पदपर पदाघात करता हूँ।"

यह कहकर चाणक्य अग्नि स्फुलिंगकी तरह वहाँसे अन्तर्हित हो गये। अन्य लोग भयसे कांपने लगे। चन्द्रगुप्त निश्चल पाषाण प्रतिमाकी भाँति नीरव बैठे रहे।

११

मगध-राज्यपर आक्रमणका उद्योग।

राक्षसकी चिन्ताका एक ही विषय था, अर्थात् किस प्रकार चाणक्यकी समस्त कूट नीतियोंको निष्फल करके चन्द्रगुप्तको सिंहासन च्युत किया जाय। इस तरह गम्भीर चिन्ताओंके आतिशय्यके कारण उन्हें रातको ठीक ठीक नींद नहीं पडती थी। उन्हें उन्निद्र रोग हो गया।

अनिद्रावश उनके सिरमें पीडा होने लगी। कुमार मलयकेतु उनसे मिलनेके लिए आये उस वक्त भादरायण, और चन्द्रभास इत्यादि राक्षससे कह रहे थे कि, चन्द्रगुप्तने राज्य भार अपने हाथोंमें ग्रहण किया है। इस सवादको सुनकर राक्षस मन ही मनबहुत प्रसन्न हुए। लेकिन मालूम नहीं क्यों, उनका हृदय इस बातपर पूर्णतया विश्वास नहीं कर रहा था, इसमें उन्हें सन्देहकी छाया प्रतीत होती थी।

वे यह अच्छी तरह जानते थे कि, चाणक्य अतिशय बुद्धिमान और कूट नीतिज्ञ हैं, अत अकारण वे चन्द्रगुप्तको कदापि दण्ड न

करेंगे। अतएव इस कलहके मूलमें भी कोई उद्देश्य निहित है। उनका भेजा हुआ दूत भी पाटलिपुत्रसे आगया, उसने भी उपर्युक्त सदेश राक्षसको सुनाया। राक्षसने तत्काल उससे पूछा — 'चन्द्रगुप्तके क्रुद्ध होनेका कारण क्या है? धनलाओ तो उत्सव का बन्द करना ही इस कलहका एकमात्र कारण है, अथवा कुछ और ही। तुम वहाँसे जो कुछ समाचार सग्रह कर लाये हो, वह सब पु आनु पु ख रूपसे मुझे बतला दो।"

दूत—जो आज्ञा, कुमार मलयकेतु पाटलिपुत्रसे चले आये हैं, चाणक्यने उनके वहाँसे चले आनेमें कोई बाधा नहीं उपस्थित की, प्रत्युत उपेक्षा ही की है। कलहका यही प्रधान कारण है।

चाणक्यने इस सवादको बाहर प्रचार कर दिया था, उनका उद्देश्य यह था, बाहरवाले समझेंगे कि, चाणक्य और चन्द्रगुप्त में विच्छेद हो गया है, अथच उन दोनोंके मनोंमें परस्पर सौहार्द बना रहेगा।

सिर्फ शत्रुओंको प्रवंचित करनेके लिए ही उन्होंने कृत्रिम क्रोध प्रकाश किया था। उनकी बातें सभी गूढ़ होती थीं परिणाम देखकर ही उनकी बातोंका अनुमान किया जा सकता था, उनपर महाकवि कालिदासकी यह युक्ति सर्वथा चरितार्थ होती थी,—

> तस्य संवृत मन्त्रस्य, गूढाकारेङ्गितस्य च।
> फलानुमेया प्रारम्भा संस्कारा प्राक्तना इव।
>
> 'रघुवंश,

अर्थात् उनके विचार—इतने सवृत थे, संकेत—कार्य प्रणाली इतनी गूढ थी कि लोग कुछ समझ ही न पाते थे। हाँ, रहस्य भेद्का एक उपाय था, परिणामको देखकर कार्यका आरम्भ जान लेना। जिस प्रकार पूर्वजन्मके सस्कारोंका अनुमान किया जाता है।

राक्षसने चन्द्रभाससे कहा, "चन्द्रभास, चन्द्रगुप्तके साथ जब चाणक्यका मनोमालिन्य और विरोध उपस्थित हो गया है, तब हमलोगोंकी मनोवाञ्छाके पूर्ण होनेमें जरा भी सन्देह नहीं है। अब चन्द्रगुप्तको हमलोग अनायास ही पराजित कर सकेंगे तुम यह निश्चय समझलो कि चन्द्रगुप्तका राज्य काल अब पूरा हो चुका। इस समय उनकी अवस्था उस रमणीके समान है, जिसका पति मर गया है, और जो शत्रुओंसे घिरी हुई है। अथवा उनकी दशा उस नौकाके समान है, जो समुद्रका उत्ताल तरगोंमें पडी हुई डूबनेके करीब है।"

इसके बाद राक्षसने दूतसे पूछा—'चाणक्य इस वक्त कहाँ हैं?"

दूतने कहा—"पाटलिपुत्रमें।"

राक्षस—"क्या? वह जङ्गल नहीं चला गया? इस अप मानके प्रतिशोध लेनेकी प्रतिज्ञा नहीं की?"

दूत—सुना हैं, शीघ्र ही वह वनवास करने चले जायँगे।

राक्षस—तभी तो सन्देह हो रहा है। उसने स्वय ही जिसे सिंहासनपर बिठलाया है, उससे अपमानित होकर कैसे

रहेगा। चन्द्रगुप्त जिसके हाथकी कठपुतली है, मगध साम्राज्य जिसके इशारेपर चलता है, उसने चन्द्रगुप्तसे अपमानित होकर भी प्रतिशोध लेनेकी प्रतिज्ञा नहीं की, इसमें अवश्य ही कोई गूढ़ रहस्य है।"

चन्द्रभासने कहा—"प्रतिज्ञा भंग न हो जाय, इस खयालसे सम्भवत प्रतिशोध लेनेकी प्रतिज्ञा उन्होंने नहीं की। अत आशंका करनेका कारण नहीं प्रतीत होता।"

राक्षसने मलयकेतुसे कहा—"कुमार, चन्द्रगुप्त मन्त्रीका एकान्त अनुयती है। मन्त्रीके बिना वह कोई काम नहीं कर सकता। और मन्त्रीके साथ जब उसका इस प्रकारका विवाद हो गया है, तो इस सुयोगकी अवहेलना करना उचित नहीं है। मैं ग्रीक् सम्राट् सेल्यूकसके निकट एक दूत भेज चुका हूँ। आप दोनों मिलकर चन्द्रगुप्तपर आक्रमण करें, तो वह नि सन्देह विपन्न हो जायगा।"

मलयकेतुने कहा—"क्या अभी आक्रमण करना होगा?"

राक्षसने जवाब दिया—"अगर चाणक्य चन्द्रगुप्तकी सहायता न करे तो चन्द्रगुप्तको राज्य च्युत करते कितनी देर लगेगी। आक्रमण करनेके लिए यही महा सुयोग है।"

मलयकेतु—तो क्या इसी वक्त आक्रमण करना कर्त्तव्य है?

राक्षस—हाँ, माताके बिना जैसे बच्चा असहाय होता है, मन्त्रीके बिना चन्द्रगुप्त भी वैसा ही है। चाणक्य जैसे कर्म-क्षम

मन्त्रीकी सहायतासे ही वह इतने बड़े राज्यको प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ है। अब, चाणक्य जब उससे अपमानित हो चुके हैं, तो कदापि उसकी सहायता नहीं करेंगे। चाणक्यकी मददके बिना चन्द्रगुप्त निश्चय ही विजयी नहीं हो सकता। अतएव क्षण भर भी विलम्ब करना अनुचित है।

मलयकेतुने कहा, "यही होगा। मैं शीघ्र ही चन्द्रगुप्तपर चढ़ाई करनेकी व्यवस्था करने जा रहा हूँ। आप सर्वथा तैयार रहिए। मैं अपनी फौजको बहुत जल्द सुसज्जित करके लाता हूँ।" यह कहकर मलयकेतु चले गये।





चाणक्यका अद्भुत षड्यन्त्र



भारतके गुप्तचरने सेल्यूकस चाणक्य—चन्द्रगुप्तके इस विरोधका संवाद और अन्यान्य आवश्यक विषय बतलाया। सेल्यूकसने अपनी अभिलषित दिग्विजयके लिये यह सुयोग देखकर चन्द्रगुप्तके साथ युद्ध करनेका निश्चय किया। किसी तरह सेल्यूकसकी कन्याको यह संवाद मिला, उसने अपने प्रेमास्पदके अमंगलकी आशंका करके पितासे कहा—"पिता, आप एक दिन जिसे पुत्रवत् स्नेह करते थे, जिसे अस्त्र कोविद बनाया है, जिसपर आपकी विशेष प्रीति थी, जो आपका कृपा भाजन था, और जो आपको अपना पितृ-स्थानीय समझता था, आपपर जो श्रद्धा और भक्ति करता था, आपकी आज्ञा पालनमें जिसे आनन्द मिलता था, उसीपर आज चढ़ाई कीजिएगा?"

सेल्यूकसने कहा, "राजनीति तुम्हारी आलोचनाका विषय नहीं है।" यह कहकर वे उठकर चले गए और मगध-विजयके लिए अपनी फौज भेज दी।

इधर चाणक्यने देखा कि चन्द्रगुप्तपर घोर विपद् उपस्थित है। उन्होंने भूतपूर्व वृद्ध प्रधान मन्त्री चन्द्रभासको बुलाकर आपसमें सलाह की और फिर एक ऐसा षड्यन्त्र करनेका निश्चय किया, जिससे शत्रुओंकी सेना उनके हस्तगत हो जाय अथवा उसमें वैमनस्य उपस्थित हो जाय। उन्होंने चन्द्रभासकी सलाहसे ऐसे ऐसे चतुर गुप्तचर चारों ओर भेजे, जिन्होंने सब जगहोंकी समस्त गुप्त-मन्त्रणाओंका संवाद लाकर चाणक्यको सावधान कर दिया।

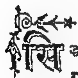
चाणक्य जब शत्रुओंकी गतिविधिसे पूर्णतया परिचित हो गए तब अपनी फौजको उन्होंने इस प्रकार सुसज्जित किया, और ऐसा सुदृढ़ व्यूह निर्माण किया, जिसका भेद करना ग्रीक सेनाके पक्षमें असाध्य था। सेल्यूकसने चन्द्रगुप्तपर बड़े जोरोंकी चढ़ाई की, लेकिन उलटा वही कैद कर लिए गए। चाणक्यने देखा कि चन्द्रगुप्तका प्रधान शत्रु सेल्यूकस तो कैदी हो गया है, और चेष्टा करनेपर राक्षस भी कैद हो सकते हैं। वे समझते थे कि, इन दोनों महाशक्तिशालियोंके साथ बन्धुता स्थापित करनेमें ही भलाई है। इसलिए विश्वासी चर भेजकर चाणक्यने बन्दी सेल्यूकससे कह लाया कि, यदि आप चन्द्रगुप्तके साथ अपनी कन्याका ब्याह कर दें, तो आपको मुक्त कर दिया जायगा।

दूतके मुखसे इस बातको सुन कर सेल्यूकस बड़े क्रुद्ध हुए। उन्होंने कहला भेजा कि जबतक मेरा जीवन है, मैं चन्द्रगुप्तके साथ अपनी कन्याका विवाह नहीं कर सकता।

लेकिन सेल्यूकसने अपने मनकी बात कही थी, कन्याके मनकी नहीं। हम पिछले परिच्छेदोंमें लिख आये हैं कि, सेल्यूकस की कन्या चन्द्रगुप्तसे प्रेम करती थी, जब उसने सुना कि, चन्द्रगुप्त मेरे साथ ब्याह करनेको उत्सुक हैं, तो उसने अनेक अनुरोध उपरोध कर पिताको सम्मत किया। शुभ-मुहूर्त में चन्द्रगुप्तके साथ सेल्यूकसकी दुहिताका परिणय कार्य सम्पन्न हो गया। लेकिन चाणक्य निश्चिन्त न हुए। वे सोचने लगे कि किस प्रकार राक्षसको हस्तगत करके उसे मन्त्रित्वका भार सौंपा जा सकता है।



षड्यन्त्रकी सफलता।


सिद्धार्थक जाहिरा तौरपर राक्षसका बहुत ही अनुगत बना रहता था लेकिन यह आनुगत्यका छल-मात्र था। वस्तुत चाणक्यके परामर्शसे ही वह कौशल पूर्वक कार्योद्धारकी चेष्टा कर रहा था। चन्द्रगुप्तके चातुर्यके सम्बन्धमें राक्षसको कुछ भी नहीं मालूम था। चाणक्य हर एक कार्य उत्तम रूपसे विवेचना करके सम्पन्न करते थे, सहसा कोई काम नहीं कर

बैठते थे। यदि वे चाहते तो, राक्षसको तभी पकड़ लेते, जब वे पाटलिपुत्रमें थे। सहजमें ही राक्षसका खून भी कर सकते थे, लेकिन विचक्षण चाणक्यने यह कुछ भी नहीं किया। भविष्यकी हानि लाभकी ओर दूरदर्शिता पूर्ण दृष्टिपात करते ही उन्हें प्रतीत हो गया कि, राक्षस जैसे बुद्धिमान् व्यक्तिको यदि कौशल पूर्वक अपने अधिकारमें कर लिया जाय, तो भविष्यमें यथेष्ट उपकार होनेकी सम्भावना है। इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए ही उन्होंने यह व्यापक षड्यन्त्र प्रारम्भ किया था।

सिद्धार्थकने कुछ आभूषण और पत्र लेकर पाटलिपुत्र जानेका विचार किया। गहनोंके बक्स और पत्रमें राक्षसकी अगूठीकी छाप दी हुई थी। अन्त शत्रु और बहि शत्रुओंका समस्त अनुसन्धान लेकर वह सतर्कता पूर्वक राक्षसके प्रासादसे बहिर्गत हुआ।

उस समय भागुरायण बैठा हुआ चाणक्यकी नीतिकी अद्भुत जटिलताकी गुत्थिया सुलझानेमें लगा हुआ था। वह सोचता था, चाणक्यका कौशल इतना कुटिल है कि, जो मलयकेतु मुझपर इतना अनुराग रखता है, जो मेरे प्रति बहुत ही प्रीतिपरायण है, उसीका मुझे अनिष्ट करना होगा। जो सदैव मुझपर विश्वास करता है, अपना आदमी समझता है, उसीके साथ मुझे कृतघ्नों जैसा आचरण करना होगा। उँह! जाने दो! जिस चिन्तासे कोई लाभ नहीं, उसके सोचनेसे ही क्या होगा? फिर मैं क्यों उसकी चिन्ता करूँ? चिन्ता करना अपने मनको

खराब करना हैं, बालूसे तेल निकालनेकी आशा करना ही व्यर्थ है।

जिस दारिद्रयने समस्त विवेक-बुद्धिको बाँध रक्खा है, उसके लौह-शृङ्खलको छिन्न करनेकी चेष्टा करनेमें सदसद् विवेचना करना व्यर्थ है। जिस अर्थके लिए हमलोगोंने मान-सम्भ्रमका लोभ परित्याग कर दिया है। हिताहित विवेचन भी आज उसीके लिए विसर्जन करना होगा।

भागुरायण जिस वक्त इस चिन्ता-सागरमें डूब उतरा रहा था, उसी वक्त मलयकेतु एक सन्तरीके साथ वहाँ आये। भागुरायणने मलयकेतुकी उपस्थिति समझ ली थी, इसका कोई लक्षण प्रतीत न हुआ। मलयकेतु कुछ दूर पर खड़े हो गये। एक पहरेदारने भागुरायणको आकर खबर दी कि, आपसे मिलनेके लिए एक सन्यासी द्वारपर खड़ा हुआ है। उन्होंने आज्ञा दी कि, "अन्दर ले आओ।' पहरेदार "जो आज्ञा" कह कर वहाँसे निष्क्रान्त हो गया।

इस सन्यासीके रूपमें जीवसिद्धि थे। अन्दर प्रवेश करते ही भागुरायणने उससे पूछा, "सम्भवत आप राक्षसके किसी कामके लिए जा रहे हैं न?"

इसके बाद जीवसिद्धिने कहा "ईश्वर न करे। मुझे ऐसे स्थानमें जाना पड़े, जहाँपर राक्षस या पिशाचका नाम भी सुनना पड़े!"

भागुरायणने कहा,—"राक्षसके साथ तो आपका, यथेष्ट सौहार्द है। शायद उन्होंने कोई अन्याय कार्य किया होगा, इसलिए आप उनपर रुष्ट हो गये हैं।"

जीवसिद्धि—"नहीं, उन्होंने कोई अपराध नहीं किया है। अपने एक कामके कारण मैं ही उनके निकट लज्जित हूं।"

भागुरायणको इस उत्तरसे बड़ा कौतूहल हुआ, उसने इस विवरणको आनुपूर्विक सुनना चाहा। जीवसिद्धिने पहले तो बहुत आपत्ति प्रकाशकी। बादको बोला, "यह बहुत ही नृशंस व्यापार है। खासकर मेरे मित्रके लिए तो यह बड़े कलङ्ककी बात है। इसलिए इसके बतलानेमें मुझे आपत्ति है। लेकिन जब आप सुननेके लिए इतना आग्रह कर रहे हैं, तो सुनिये। राक्षस जब पाटलिपुत्रमें रहते थे, तब उनके साथ मेरी घनिष्ठ मैत्री थी। उसी समय राक्षसने विषकन्या भेजकर पर्वतकका खून किया था।"

मलयकेतु इन दोनोंकी बातोंको बड़े कौतूहल पूर्वक सुन रहे थे। उनको विश्वास था कि, चाणक्यने ही कौशल-पूर्वक उनके पिताकी हत्या करवा दी है। राक्षस तो अपने विश्वस्त बन्धु हैं। उनके द्वारा ऐसा भीषण काण्ड अनुष्ठित किया गया है, इस प्रकारकी कल्पना तो उन्होंने स्वप्नमें भी नहीं की थी। अत इस बातको सुनकर आश्चर्यान्वित और आतंकसे सिहर उठे। राक्षस जैसा विश्वासी मनुष्य ऐसी पैशाचिक लीलाका अनुष्ठाता हो सकता है, यह सोचकर उनका कलेजा काप उठा। लेकिन उन्होंने कोई बात कही नहीं, निर्वाक् खड़े रहे। जीवसिद्धिने चाणक्यके उपदेशानुसार ही ऐसा कहा था। भागुरायण, जीवसिद्धि वगैरह सभी चाणक्यके गुप्तचर थे। मलयकेतुका राक्षसके साथ अन्त

विच्छेद घटित करना ही इस षड्यन्त्रका उद्देश्य था। इसीलिए भागुरायणके सम्मुख पूर्वोक्त बातें कही गई थीं।

भागुरायण—इसके बाद क्या हुआ ?

जीवसिद्धि—मैं राक्षसका मित्र हूं। इस वास्ते चाणक्यने मुझे अपमानित करके पाटलिपुत्रसे भगा दिया। अब राक्षसने एक और भी दुष्कार्य किया है, जिसके कारण उसे पृथ्वीसे सदाके लिए विदा लेनी पड़ेगी।"

भागुरायण—चाणक्यने पर्वतकके साथ यह प्रतिश्रुति की थी, कि चन्द्रगुप्तके विजयी होनेपर आधा राज्य मैं बांट दूँगा, सो उस प्रतिश्रुतिकी रक्षा न करनी पड़े, अर्थात् राज्यका बांट बखरा न करना पड़े, इसलिए चाणक्यने पर्वतककी हत्या की है, राक्षसने नहीं, हम लोगोंने तो यही सुन रक्खा है।

जीवसिद्धिने बहुत ही व्यग्रभावसे कहा—"नहीं, नहीं, सत्य घटना यों नहीं है। चाणक्यने विषकन्याका नामतक नहीं सुना, हत्या करना तो दूरकी बात है।"

बस, यहीं तक। मलयकेतु ये सब बातें सुनकर विस्मयसे हतबुद्धि हो गए। राक्षस विश्वासघातक है—यह सोचते ही उनके सर्वाङ्गमें क्रोधकी आग जल उठी। चाणक्यने भागुरायणको पहले ही सिखा रक्खा था कि, वह उपाय करना, जिससे मलयकेतु राक्षसपर अविश्वास और घृणा करने लगे। लेकिन इस बातका अच्छी तरहसे ख्याल रखना कि, राक्षसके प्राणोंपर किसी प्रकारकी आंच न आये। इसलिए भागुरायणने कहा, "कुमार

दु खित मत हो, आओ, बैठो। आपके साथ बहुत सी बातें करनी हैं।" मलयकेतु उनके समीप बैठ गये, और अपना व कव्य सुनाने लगे।

इसके बाद भागुरायणने कहा—"राजनीतिका तो ढग ही ऐसा है। यह शत्रुको मित्र और मित्रको शत्रु बना देती है। यह राजनीतिकी प्रकृति है। साधारण मनुष्य जिसे अन्याय समझता है, राजनीति क्षेत्रमें वह अन्याय रूपमें परिगणित नहीं भी किया जा सकता है। राजनीति साधारण न्याय, अन्यायकी सीमा उलङ्घन करती है। अत राक्षसने पर्वतकके साथ जैसा व्यवहार किया है, मैं उसे दोष नहीं मानता। जबतक आप नन्द राज्यपर अधिकार न कर लें, तबतक राक्षसका सग परित्याग करना यद्यपि उचित नहीं है। नन्दराज्यकी प्राप्तिके बाद जो मुनासिब समझिएगा, कीजिएगा।"

मलयकेतुने इस उपदेशकी सारवत्ता उपलब्ध करके कहा, "हाँ, तुम्हारी सलाह युक्ति सगत है। राक्षसकी हत्या करनेसे प्रजा वर्ग क्षुब्ध हो उठेगा और इससे हमारे उद्देश्य सिद्धिके मार्गमें बाधा पड़ेगी।"

इस समय भागुरायणके कुछ अनुचर एक मनुष्यको कैद कर वहाँ ले आये। इस व्यक्तिका अपराध यह बतलाया गया कि, वह बिना अनुमतिके शिविरके बाहर जा रहा था।

भागुरायणने उस व्यक्तिसे पूछा, "तुम कौन हो?"

उस व्यक्तिने कहा,—"मैं राक्षसका अनुचर हू।"

भागुरायण—तुम उस शिविरसे बिना आज्ञा, क्यों बाहर जा रहे थे ?

उसने जवाब दिया—"एक विशेष प्रयोजनीय कार्योपलक्ष्यसे ही मुझे ऐसा करना पड़ा।"

भागुरायणने ईषत् क्रुद्ध स्वरसे कहा,—"तुम्हारा ऐसा कौनसा आवश्यक काम था कि जिससे तुम राजाके आदेशका पालन न कर सके। राजाकी आज्ञाको तुमने क्यों अमान्य किया ?"

यह धूर्त व्यक्ति सिद्धार्थक था। उसके हाथमें एक पत्र था। मलयकेतुने वह पत्र देख लिया और उसे दे देनेको कहा। भागुरायणने सिद्धार्थकके हाथसे उस पत्रको लेकर देखा कि, उसमें राक्षसकी नामांकित अगूठीकी छाप है। उसने यह पत्र मलयकेतुको दिखलाया। मलयकेतुने सतर्क भावसे उसका आवरण उन्मोचन कर पत्रके निकालनेकी आज्ञा प्रदान की। और इस ओर विशेष ध्यान रखखा कि, अगूठीकी छाप नष्ट न हो। भागुरायणने पत्र खोला, लेकिन किसने कहाँसे किसको लिखा है, यह सब बातें पत्रसे बिल्कुल नहीं मालूम होती थीं। मलयकेतु पढ़ने लगे। पत्रमें यह लिखा था —

"हमारे शत्रु ने चाणक्यको पदच्युत करके सत्य-परायणताका परिचय दिया है। हमारी जो मित्र मण्डली सन्धि-सूत्रमें आबद्ध हुई है, उसको तुष्ट करनेकी आशा देकर विवेचनाका कार्य किया गया है। अनुग्रह प्राप्त होनेपर वे लोग वर्त्तमान आश्रयको विनष्ट करके आपका आश्रय ग्रहण करेंगे। इसमेंसे कोई ता

शत्रुओंके अर्थको चाहता है, कोई सैन्यपर प्रभुत्व कामना करता है, और कोई राज्य प्रार्थी है। आपके भेजे हुए ३ आभूषण मिल गये हैं। मैं भी कुछ भेज रहा हूँ, स्वीकार करोगे, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। विस्तृत विवरण मेरे इस आदमीसे जान सकोगे।"

मलयकेतुने विस्मित कण्ठसे कहा,—"यह कैसा पत्र है?"

भागुरायणने सिद्धार्थकसे पूछा, "यह किसका पत्र है?"

सिद्धार्थक बोला—"मुझे नहीं मालूम?"

भागुरायण—तुम्हीं पत्र वाहक हो, अथच यह किसका पत्र है, तुम्हें नहीं मालूम, यह बात असम्भव अतएव मिथ्या है। अत यह सब चतुरता छोड़ दो। तुमसे कौन मौखिक सवाद सुनेगा, जरा बतलाओ तो।

सिद्धार्थकने कहा—"यह बात तुम सुनोगे।"

इस बातमें व्यंग्यका आभास देखकर भागुरायणने क्रुद्ध स्वरसे कहा, "हमलोग! सहज भावसे हमारी बातका जवाब दो।"

सिद्धार्थकने डरनेका बहाना कर कहा—"मैं, कैद हो गया हूँ, मेरा दिमाग अस्त व्यस्त हो गया है। इसलिये क्या कहने जाकर क्या कह बैठा, समझ हीमें नहीं आता।"

भागुरायणने उच्च स्वरसे चिल्लाकर कहा—"इस बार तुम्हें समझा देंगे, तुम अच्छी तरह समझ सकोगे।" यह कहकर उसे मारनेकी आज्ञा प्रदान की। तत्काल भीषणाकार, यम किंकर सदृश एक व्यक्ति आकर उसे बाहर ले गया। उसने मारनेके लिए

सिद्धार्थक [illegible]
एक [illegible]
[illegible]
[illegible]
मलयकेतुको [illegible]
[illegible]
[illegible] है। [illegible]
[illegible]
[illegible] है।

[illegible] हूँ ?"

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] हूँ [illegible]
सिपाही [illegible]
पढ़कर सिद्धार्थकने [illegible]
"राक्षसने यह पत्र [illegible]
सिद्धार्थ इसे सम्पूर्ण [illegible]
मलयकेतुके [illegible]
कौन, मलयकेतुका [illegible]

कौन धन चाहता है, सब विवरण ठीक ठीक बतला दिये। मलयकेतु इस प्रकारका रहस्य सुनकर बड़े कुपित हुए और तत्काल राक्षसको बुलानेके लिए अपना एक सिपाही भेजा। राक्षस उस समय अपने घरमें बैठे हुए सोच रहे थे कि, किस तरह युद्ध करनेसे मलयकेतु चन्द्रगुप्तको परास्त कर सकते हैं। राक्षस मलयकेतुके शुभाकाक्षी थे, इसलिए सर्वदा उन्हींका हित चिन्तन करते रहते थे। वे गम्भीर चिन्तामें मग्न थे, सहसा दूतने जाकर कहा, मलयकेतु आपसे मुलाकात करना चाहते हैं। राक्षसने दूतसे कहा 'बैठो' और वस्त्र बदलकर मलयकेतुके समीप गये। मलयकेतुके निकट जब वे पहुंचे, तब मलयकेतुने उनको सम्मान पूर्वक प्रणाम किया, और उपयुक्त आसन दिखला कर उसपर बैठनेका संकेत किया। राक्षसके बैठ जानेके बाद मलय केतुने उनसे विनय पूर्वक पूछा—"क्या पाटलिपुत्रको आपने कोई आदमी भेजा है? अथवा वहांसे क्या कोइ आपका भेजा हुआ चर वापस लौट रहा है।"

राक्षसने कहा, "नहीं, अब वहाँपर किसीके भेजने की, अथवा वहाँसे किसीके आनेकी काइ जरूरत नहीं है। कारण अब तो हमीं लोग बहुत जल्द वहाँ चलेंगे।"

मलय केतुने सिद्धार्थककी ओर संकेत कर कहा, "तब आप इनके द्वारा पत्र क्यों भेज रहे थे?"

राक्षसने विस्मित होकर कहा—'कहाँ? किसको? सिद्धार्थकको? यह क्या?'आप तो बड़े मजेकी दिल्लगी कर रहे हैं।"

लेकिन इस बार मलयकेतुके कुछ कहनेके पहले ही सिद्धार्थकने लज्जाका भान करके कहा—"मन्त्रीजी, मुझपर बहुत मार पड़ी। लाचार होकर मैंने समस्त गुप्त बातोंको प्रकट कर दिया।"

राक्षसने कहा—"क्या प्रकट कर दिया? कौन सी मेरी गुप्त बात तुम छिपा नहीं सके। मैं तो तुम्हारी बातोंका मतलब नहीं समझ सका।"

सिद्धार्थकने चौंककर कहा, "कह डाला है यह—मार पड़नेसे।"

वह और कुछ भी न कह सका। हतबुद्धिकी तरह सिर झुकाकर बैठा रहा। मलयकेतुने भागुरायणसे कहा, "मन्त्रीजीके सम्मुख यह डरके मारे नहीं बोल रहा है, तुम व्यापार सब समझा दो।"

भागुरायणने कहा—"यह व्यक्ति कहता है कि, आप इसके द्वारा चन्द्रगुप्तको पत्र भेज रहे थे।"

राक्षसने रुष्ट होकर कहा—"सिद्धार्थक, क्या यह सच है? क्या मैं तुमको चन्द्रगुप्तके पास भेज रहा था?"

सिद्धार्थकने लज्जितकी तरह नम्र स्वरसे कहा, "क्या करूँ? मन्त्रीजी, बहुत मार पड़नेके कारण मैं बौखला गया, और सब बातें कबूल कर लीं।"

भागुरायणने पूर्वोक्त पत्र निकालकर राक्षसको दिखलाया।

राक्षसने वह पत्र देखते ही कहा, "यह शत्रुओंकी करतूत है, यह चिट्ठी अवश्य ही जाली है।"

मलयकेतुने फिर पूछा,—"आप अलंकार क्यों भेज रहे थे ?"

राक्षसने अलंकारोंको देखकर कहा—"ये अलंकार आपने मुझे दिये थे और मैंने सन्तुष्ट होकर सिद्धार्थकको पुरस्कार दे दिया था।

मलयकेतुने कहा—"पत्रमें तो अपनी अंगूठोकी छाप लगी हुई है।"

राक्षसने कहा—"यह सब शत्रुओंका षड्यन्त्र है। सब विपक्षियोंकी कार्रवाई है। कितना भीषण चक्र है।"

सिद्धार्थककी ओर देखकर भागुरायणने पूछा—"यह पत्र किसका लिखा हुआ है ? तुम चुप क्यों हो रहे हो ? बोलते क्यों नहीं ?"

सिद्धार्थकने राक्षसके मुंहकीओर देखकर सर झुका लिया।

भागुरायणने कहा, "क्यों अनर्थक मार खानेका विचार करते हो ? मैं जो कुछ पूछ रहा हू, उसका स्पष्ट उत्तर दो।"

"चन्द्रभासने लिखा है" कहकर सिद्धार्थकने फिर सिर झुका लिया। राक्षसने देखा, सचमुच ही ये हस्ताक्षर चन्द्रभासके हैं। वे नीरव होकर सोचने लगे। उन्होंने सोच विचार कर अनुमान किया कि, एक दिन मैंने चन्द्रभासको मन्त्रि पदसे विताड़ित किया था, उसीका प्रतिशोध लेनेके लिए—इसी उद्देश्यसे प्रेरित होकर चन्द्रभासने ऐसा किया है।

मलयकेतु अलंकारोंकी पोटली खोलकर, देखनेके बाद बहुत चकित हुए। बोले,—"यह क्या ? ये तो हमारे पिताजीके आभूषण हैं।"

राक्षसने कहा—मैंने सर्राफसे खरीदा था।

मलयकेतुने क्रुद्ध स्वरसे कहा, "तुमने खरीदा है? चन्द्रगुप्तने ये बेचनेके लिए सर्राफके पास भेजे थे। तुमने कृतघ्नकी तरह विष कन्या भेजकर हमारे पिताका खून करा डाला, और अब चन्द्रगुप्तके मन्त्री बननेकी लालचसे मेरे खिलाफ षड्यन्त्र कर रहे हो। मेरे पिताके शरीरके आभूषणोंको तुम इस व्यक्तिके द्वारा चन्द्रगुप्तके पास भेज रहे थे। तुम यहाँसे निकल जाओ। मेरे अधीनस्थ जो राजन्य वर्ग इस षड्यन्त्रमें शामिल हुआ है, उन लोगोंका भी समुचित दण्ड विधान करूँगा। राज्य और अर्थ-लोभियोंको जीते ही जमीनमें गड़वा दूँगा, और जो लोग हाथियों-पर कब्जा करना चाहते हैं, उनलोगोंको हाथियोंके पैरोंतले कुचल्वा दूँगा। तुम जाओ, और स्वच्छन्दता पूर्वक अपने प्यारे चन्द्रगुप्त और चाणक्यसे मिलो। इनलोगोंको उपयुक्त दण्ड देनेके बाद तुम तीनों आदमियोंको एक साथ ही दण्डित करूँगा।"

क्रोध-क्षिप्त मलय केतुने पत्रोल्लिखित राज्यादि लुब्ध राज-गणको जीते ही पृथ्वीमें प्रोथित करनेके लिए और अनेकोंको हाथियोंके पैरोंसे विदलित करनेका हुक्म दिया। भागुरायणने कहा,—"कुमार और समय नष्ट करनेकी क्या जरूरत है? तुरन्त पाटलिपुत्रपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दीजिए। शुभस्य शीघ्रम्! देर करनेमें लाभ ही क्या है?"

मलय केतुने भागुरायणकी बातका समर्थन किया और युद्धके लिए प्रस्तुत होने लगे। बुद्धिमान् राक्षसने समझ लिया कि यह

सब कूटबुद्धि चाणक्यकी ही चातुरी है। सिद्धार्थक और जीवसिद्धि वगैरह सभी उनके चर हैं और वे स्वयं भी चाणक्य के कौशलसे प्रतारित हुए हैं। चाणक्यके ही षड्यन्त्रसे मलय केतुके साथ उनका विच्छेद हो गया है। वे निस्तब्ध होकर इसी तरहकी अनेक बातें सोचने लगे।



राक्षसका मित्र-प्रेम।



स नकली चिट्ठीमें जिन पांच राजोंका नाम लिखा हुआ था, मलयकेतुकी आज्ञानुसार उनको मार डाला गया। इस घटनाको देखकर अन्यान्य अनुगत राजोंको इतना भय हुआ कि, सबके सब एक एक करके मलयकेतुका आश्रय छोड़कर खिसकने लगे। सिद्धार्थक मलयकेतुका परम विश्वास भाजन बनकर उनके मातहत कार्य करता था। अथच था वह

चाणक्यका अनुचर। बाहरसे तो वह अपनेको मलय केतुका विश्वास पात्र कर्मचारी बतलाता था, लेकिन था वह उन्हींका गुप्त शत्रु। सुयोग मिलनेपर भागुरायण प्रभृति चाणक्यके अनुचरोंने मलयकेतुको शृङ्खलाबद्ध कर लिया। इधर राक्षसने भी घटना चक्रसे बाधित होकर पाटलिपुत्रको प्रस्थान किया। चाणक्यने सम्पूर्ण वृत्त पहलेसे ही सुन रक्खा था। वे इसी उपायकी चिन्तामें लगे कि, किस तरह राक्षसको अपने कब्जेमें किया जाय।

पाटलिपुत्र नगरकी एक ओर एक पुरातन और परित्यक्त उद्यान था। वहाँपर पुष्पलताओंका चिन्हमात्र न था, सिर्फ कुछ थोड़ेसे पत्र-शाखाबहुल वृक्षोंने पुञ्जीभूत होकर आलोक प्रवेशके पथको रुद्धकर घनीभूत अन्धकारकी सृष्टि कर रक्खी थी। यह अन्धकार इतना प्रगाढ़ और निस्तब्ध था, कि वहाँ प्रवेश करते समय अन्तर कंपित हो उठता था। कुछ थोड़ेसे जीर्ण दरवाजे, और टूटी फूटी प्राचीर, उद्यानकी निर्जनता, अयत्न और प्राचीनताको परिस्फुट करनेमें सहायक हो रही थी और पुरातन सरोवर जल शून्य तथा लता-गुल्म वेष्टित होकर पड़ा हुआ था।

राक्षस वहाँपर जाकर उस पुराने उद्यानमें प्रविष्ट हो गये। उनके चित्तमें अतीत स्मृति जागरुक हो उठी। विगत सुख और स्मृतिपूर्ण चित्र समूह एक एक करके उनके सामने 'बायस्कोप' के चित्रोंकी भांति भासित होने लगे। नन्दोंकी बातें, मलयकेतुके अविश्वासकी बातें, उनके मनो-मन्दिरमें मूर्त्तिमती होकर नृत्य

करने लगीं। उन्हें याद आया कि महाराज नन्द इसी उद्यानमें बैठकर अपने मित्रोंके साथ आलाप करते थे। अपने सुहृद्-राजन्य-वर्गोंके साथ यहींपर आमोद प्रमोद करते थे। वे दिन कैसे सुख पूर्ण थे! कितने आनन्दके साथ मैं यहाँ रहा करता था। किन्तु हा! "तेहि नो दिवसा गता।" अतीतके सुख चित्र आजके दु:खको द्विगुणित कर रहे थे। हृदयकी वेदनाको बढ़ा रहे थे। उनके मनमें उस समय अपार करुणा भरी हुई थी। अतीत, वर्तमानकी वेदनाकी मूर्त्त प्रतिमारूपसे चित्रित कर रहा था। अनुताप, क्रोध और क्षोभ प्रभृति मनोविकार उनके चित्तको विक्षुब्ध कर रहे थे। कालकी कैसी विचित्र गति है। नन्दके पाटलिपुत्रमें उन्हींके प्रधान मन्त्री राक्षस आज निराश्रय हैं। इस निर्जन और निस्तब्ध काननमें उन्हें छिपकर रहना पड़ता है। वे जितना ही सोचने लगे, उतना ही अधिक उनका हृदय मर्म भेदी वेदनासे उच्छ्वसित होने लगा और उसीकी विक्षुब्ध ऊर्मि-मालायें आँखोंके कोनोंमें उथली पड़ती थीं।

इसी समय राक्षसने देखा कि एक मनुष्य गलेमें रस्सी बाँधकर आत्म हत्याका उद्योग कर रहा है। राक्षसने उसे देख लिया लेकिन उसने राक्षसको नहीं देख पाया। राक्षसने तत्काल द्रुत-गतिसे उसके पास पहुँचकर और उसके इस कार्यमें बाधा देकर कहा, "अरे! यह क्या! क्योंजी! तुम यह क्या कर रहे हो?"

उस पुरुषने कहा, "महाशय, मैं अपने एक प्रिय मित्रकी

मृत्युसे व्यथित होकर आत्महत्या करनेको उद्यत हुआ हूँ। मेरे हृदयकी सबसे प्यारी चीज ही जब नष्ट हो गई, तो मेरे जीनेसे क्या लाभ?" राक्षस विचारने लगे कि इसकी अवस्था भी हमारे ही अनुरूप है। इसीलिए उसकी अवस्थापर उन्हें दया मालूम हुई और उन्होंने कहा,—अगर कोई हर्ज न हो तो तुम अपनी कहानी मुझे सुनादो। मैं इस व्यापारको जाननेके लिए बहुत ही उत्सुक हो रहा हूँ, तुम मेरे इस कौतूहलको शान्त करो।"

उस मनुष्यने कहा—"मुझे अपनी 'राम कहानी' सुनानेमें तनिक भी आपत्ति नहीं है, लेकिन असल मतलब तो यह है, कि मैं मित्र वियोगसे बहुत कातर हो गया हूँ, किसी तरह आपके कौतूहलको शान्त नहीं कर सकूँगा। मैं इसी क्षण मरूँगा।"

राक्षस सोचने लगे—इस आदमीका अपने मित्रके प्रति कैसा प्रगाढ़ और अकृत्रिम प्रेम है, और मैं अपने मित्रके विनाशके पश्चात् भी निश्चेष्ट बैठा हुआ हूँ। उन्होंने उस मनुष्यसे घटनाके प्रकाश करनेके लिए फिर अनुरोध किया। उसने राक्षसको बहुत उत्सुक देखकर कहा—"आप जब सुननेके लिए इतनी जिद कर रहे हैं, बिना घटनाके सुने हुए किसी तरह शान्त होना नहीं चाहते, तो सुनिये। इस शहरमें विष्णुदास नामक एक वणिक् रहते हैं, वही मेरे सुहृद हैं।"

राक्षस जानते थे कि, विष्णुदास, चन्दनदासके मित्र हैं, अतएव चन्दनदासका संवाद इस व्यक्तिसे पाया जा सकता है। इसीलिए उन्होंने फिर उससे पूछा—"फिर?"

उसने कहा—"आज विष्णुदासको अग्निमें जलकर मरना होगा। यह मृत्यु सवाद सुननेके पहले जिससे मेरे जीवनका अवसान हो जाय, उसीकी व्यवस्था करने यहाँ आया हूँ।"

राक्षस—तुम्हारे मित्रको क्यों अग्नि दग्ध होकर प्राण विसर्जन करना पड़ेगा? क्या राजाके हुक्मसे? क्यों?"

आदमीने कहा—"ईश्वर करे, चन्द्रगुप्तके राज्यमें ऐसे निर्मम कार्यका अनुष्ठान न हो।"

राक्षस—तो फिर वे क्यों आगमें जलकर भस्मसात् होंगे? तुम जिस तरह बन्धु-वियोगके दुःखमें मृत्यु-वरण करनेके लिए प्रस्तुत हो, क्या वे भी अपने किसी बान्धवकी मृत्यु-वेदनासे अग्नि-वरण करनेको प्रस्तुत हैं?

उसने कहा—"हाँ।"

राक्षसने अत्यन्त उत्सुक भावसे कहा—"तो तुरन्त सब बातें स्पष्ट रूपसे कहो, अब एक क्षण भरका भी विलम्बका असह्य हो रहा है।"

उसने कहा—"बस, मैं अब कुछ नहीं बतलाऊँगा, मुझे शान्तिके साथ मरने दो।"

लेकिन राक्षस भी बिना सम्पूर्ण विवरण सुने शान्त होनेवाले जीव नहीं थे। लाचार होकर उस मनुष्यको बतलाना ही पड़ा। उसने कहा "इस नगरमें चन्दनदास नामक एक वैश्य है।"

राक्षसका कलेजा काँप उठा। किसी एक अज्ञात आशंकासे उनका चित्त चचल हो गया और वक्षःस्थल स्पन्दित होने

लगा। चन्दनद सदीके घरमें तो वे अपने परिवारको रख आये थे। सम्भवत उसकी अस्वीकृति ही चन्दनदासकी मृत्युका कारण हैं। सत्य स वाद जाननेके लिए व्यग्र होकर राक्षसने पूछा—"जल्दी, बतलाओ, उसे क्या हुआ?"

उसने कहा—"वही विष्णुदासके मित्र हैं। उनकी प्राण रक्षाके लिए विष्णुदासने अपना सर्वस्व देना चाहा था, चन्द्रगुप्तसे अपनी समस्त सम्पत्तिके विनिमयमें उसने अपने बन्धुकी प्राण-भिक्षा चाही थी।" राक्षसने सोचा, "जो व्यक्ति इस तरह अपना यथा सर्वस्व मित्रके लिए व्यय करनेको प्रस्तुत है, वह निश्चय महापुरुष है। इस तरहके व्यक्ति संसारमें विरले हैं। उन्होंने पूछा—"इसके उत्तरमें चन्द्रगुप्तने क्या कहा?"

वह बोला—"चन्द्रगुप्तने जवाब दिया कि, धनके लिए चन्दन कैद नहीं किया गया है। नन्दके मन्त्री राक्षसके परिवारको उन्होंने कहीं छिपा रक्खा है, इस कारण उन्हें दण्डित किया जा रहा है। अगर वे परिवारको हमारे हाथोंमें सौंप दें, अथवा उसका पता बतला दें, तो उन्हें मुक्त किया जा सकता है, अन्यथा नहीं। चन्दनदासको वध्य भूमिमें भेजा चुका है। उनके मृत्यु-संवादके सुननेके पहले ही विष्णुदास नगरके बाहर कहीं चला गया है। आगमें जल मरनेकी प्रतिज्ञा करके मैं भी उनका मरण सवाद सुननेके पहले ही आत्म-त्याग करनेका संकल्प कर उद्बधनकी व्यवस्था कर रहा था।

राक्षस—चन्दनदासका वध अभी तो नहीं किया गया?

उसने कहा—"जी, नहीं; अभी तो वध नहीं किया गया, लेकिन आज ही वध किया जायगा।"

राक्षस—तुम विष्णुदासको मृत्यु-चेष्टासे विरत होनेको कहो। मैं चन्दनदासको अवश्य बचाऊँगा।

उसने विस्मित-भावसे कहा—"आप किस तरह उनकी रक्षा कीजिएगा?"

राक्षसने कहा—"मेरे हाथमें यह तलवार देख रहे हो, इसकी सहायतासे उनकी रक्षा करूँगा।"

उस व्यक्तिने कहा—"चन्दनदासकी प्राण-रक्षाके लिए आप जिस प्रकार उद्ग्रीव हैं, उससे तो यह प्रतीत होता है कि सुविख्यात मन्त्री राक्षस आप ही हैं।"

यह कहकर वह राक्षसके सम्मुख आया, और उनके चरणोंपर गिर पड़ा। राक्षसको मंजूर करना पड़ा कि, मैं ही राक्षस हूं।

यह सुनते ही उसने अधिक व्यग्रभावसे राक्षसको पकड़कर कहा—"मेरा परम सौभाग्य है, जो आपके दर्शन मुझे अनायास मिल गये। अपराध क्षमा कीजिएगा, मैं एक प्रार्थना करना चाहता हूं। क्या आप यह जानते हैं कि चन्दनदासको एक व्यक्ति वध्य-भूमिसे जबरदस्ती छुड़ा ले गया था, उस अपराधमें उस वध्यभूमिमें जो लोग हत्या कार्यमें नियुक्त थे, उन समस्त घातकोंके प्राण-दण्डकी व्यवस्था की गयी थी। उस समयसे घातक गण सतर्क हो गये हैं, अतएव अगर वे लोग वध्यभूमिमें किसी अस्त्र धारी पुरुषको देख पायेंगे, तो वे लोग कदापि चुप नहीं रहेंगे।

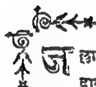
आप अगर खड्ग लेकर वहाँ जायेंगे तो आप ही चन्दनदासके विनाशका कारण बनेंगे। कारण, अगर किसी कौशलसे उनके प्राण-रक्षाकी संभावना रह गई होगी, तो आपके अस्त्र ले जानेपर उसका अंकुर ही विनष्ट हो जायगा। अत वहाँपर अस्त्र लेकर न जानेमें ही भलाई है।"

राक्षसने सोचा, 'यह तो बहुत ही जटिल रहस्य है। चाण॰ क्यका कोई कार्य सरल नहीं है। सभी कार्यों का उद्देश्य है, गूढ़, दुर्भेद्य, और दुर्बोध्य। जो हो। चन्दनदास आज मेरे ही कारण विपन्न हैं, उसकी रक्षा अगर प्राण विनिमय तकसे हो सके, तो भी करनी होगी।"





चन्दनदासकी मुक्ति ।



जल्लाद चन्दनदासको वध्यभूमिमें ले गये। पथिक समुदाय उनको वध्यभूमिमें ले जाते देखकर कम्पित होने लगा। समस्त दर्शकोंके मन एक अज्ञात आशंकासे सिहर उठे। चन्दनदासको अपने कन्धोंपर शूल वहन करके ले जाना पड़ा था। उनको मृत्यु-परिच्छद भी पहना दिये गये थे। उनकी स्त्री और पुत्र उनके पीछे आंसू बहाते हुए, उद्वेलित हृदयसे जा रहे थे। उनके हृदयका वेदना भार पाषाणकी तरह उनके वक्ष स्थलको पीड़ित कर रहा था। जल्लाद, राजाका अप्रिय अनुष्ठान करनेसे क्या परिणाम होता है, यह चन्दनदासको अरत्याके प्रति निर्देश करके लोगोंसे सतर्क कर रहे थे। वे लोग कहते थे—"अगर अब भी चन्दनदास राक्षसके परिवारका पता बतलायें, तो उनकी मुक्ति हो सकती है। वे निष्कृति पा सकते हैं। अन्यथा शूलीपर चढ़कर उन्हें प्राण देना पड़ेगा। राज शक्तिके विरुद्ध दण्डायमान होकर किसी कार्यके करनेका ऐसा ही प्रतिफल मिलता है।"



चन्दनदासको फांसी।

(देखिये—पृष्ठ संख्या १२३)

चन्दनदास अश्रु-प्लावित नेत्रोंसे कहने लगे,—"जिससे चरित्रमें कोई फल कलंकलेपन कर सके, ऐसा कार्य मैंने जीवन भरमें नहीं किया। अथच इन लोगोंके निष्ठुर विचारसे मुझे प्राण त्याग करना पड़ेगा।" उन्हें अपने आत्मीय-स्वजनों और बन्धु बान्धवोंकी याद आने लगी, और साथ ही नयन-युगल अश्रु-पूर्ण होने लगे।

घातक-गण चन्दनदासको सम्बोधन करके कहने लगे—"आप श्मशानमें आ चुके हैं, अतएव अपनी स्त्री और पुत्रको वापस कर दीजिए।"

चन्दनदासने स्त्रीसे वहाँसे प्रस्थान करनेका अनुरोध किया। स्त्री अजस्र अश्रु-विसर्जन करने लगी। इसके बाद वेदनातुर कण्ठसे बोली,—"मैं नहीं लौटूंगी। स्वामि वियोगके समय आर्य-नहि लायें कभी अपने जीवनको लेकर वापस नहीं लौटतीं।"

चन्दनदासने सान्त्वना देनेके विचारसे कहा, "मेरी मृत्यु तो दुःख करने लायक नहीं है। मैं तो किसी अपराधका अपराधी बनकर शूलीपर चढ़ने नहीं जा रहा हूँ। मैं मर रहा हूँ बन्धुके उपकारके लिए, धर्मके लिए, कर्त्तव्यके लिए!"

उनकी पत्नीने कहा,—तथापि स्त्री क्या ऐसी दशामें स्वामीको छोड़कर घर वापस लौट सकती है?"

चन्दनदास बोले,—"तब तुमने क्या स्थिर किया है?"

उनकी पत्नीने दृढ़ता-पूर्वक कहा,—"मैं तुम्हारी अनुगामिनी होऊँगी।"

चन्दनदासने सस्नेह करके कहा,—"यह तुम अनुचित कर रही

हो, तुम यदि जीवित नहीं रहोगी, तो इस दुग्ध-पोष्य शिशुकी कौन रक्षा करेगा? इसका क्या उपाय होगा?"

उनकी पत्नीने कहा—"ईश्वर हैं।"

यह कहकर उन्होंने पुत्रको पितृ चरणोंमें अंतिम प्रणाम करने के लिए कहा। पुत्रने पितृ-चरणोंमें लुंठित होकर कहा, "पिता मैं क्या करूँगा? मुझ अनाथकी देख-भाल कौन करेगा? मैं कहाँ रहूँगा?"

चन्दनदास—जिस देशमें चाणक्य न हों, वहाँपर जाकर निवास करना। उनके नयन पल्लव अश्रु-सिक्त हो गये।

इसी समय जल्लादोंने हुकार करके कहा,—"महाशय, शूली प्रस्तुत है, आप भी तैयार हो जाइये।"

चन्दनदासकी स्त्री हाहाकार करके रो पड़ीं। चन्दनदासने कहा, "अनर्थक क्यों रो रही हो? बन्धुके लिए प्राण-त्याग करना—यह तो सुखकी—आनन्दकी बात है। इसके लिए दुःख क्यों किया जाय?"

जल्लाद चन्दनदासको शूलीपर चढ़ानेके लिए तैयार करने लगे। चन्दनदास बोले—"जरा देर ठहर जाइये, मैं इस बच्चेको सान्त्वना दे लूं।"

पुत्रको हृदयसे लगाकर बोले—"बेटा, मरना तो होगा ही, समझ लो, मित्रके लिए ही प्राण विसर्जित हो रहे हैं। यह तो पुण्य कर्म है। इसमें हानि ही क्या है, बेटा?"

पुत्रने कहा—"नहीं, मैं इसके लिए जरा भी दुःखित न

होऊँगा। यह तो हमलोगोंका वंश परम्परागत धर्म है। यही हमलोगोंका अक्षय गौरव है।"

जल्लाद जब चन्दनदासको पकड़ने लगे, तो उनकी स्त्रीने सिरमें कराघात करके तीव्र स्वरसे कहा—"बचाओ! बचाओ!"

ठीक इसी समय राक्षस वध्यभूमिमें उपस्थित होकर बोले—"डरो मत—मत डरो।" राक्षसको देखकर चन्दनदास निर्वाक् हो गये। और सहसा बोल उठे—"यह क्या? मेरे आत्म त्यागकी समस्त वासनायें व्यर्थ करके—मेरी वेदनाको द्विगुणित करनेके लिए आप क्यों आये?"

राक्षसने कहा—"तिरस्कार मत करो, मित्र! मैं तो अपनी स्वार्थ सिद्धिके लिए ही यहाँ इस समय आया हूँ।"

जल्लादोंसे राक्षसने कड़ककर कहा,—"तुमलोग चाणक्यसे जाकर कह दो कि, जिसके कारण चन्दनदासके प्रति मृत्यु दण्डका आदेश हुआ है, वही राक्षस आ गया है।"

थोड़ी ही देरमें चन्द्रभास और चाणक्य वहाँपर आ पहुँचे। निकट आनेपर राक्षसने उनको पहचाना। चाणक्यने भी राक्षसको पहचान लिया। चाणक्यने राक्षसको नमस्कार करके चन्द्रभासका परिचय प्रदान किया राक्षसने चाणक्यसे कहा,—"चाण्डालोंके स्पर्शसे मेरी देह दूषित हो गयी है इस कलुषित शरीरको नमस्कार करना आपको उचित नहीं है।"

चाणक्यने कहा, "किसी चाण्डालने आपकी देहका स्पर्श नहीं किया। जिन लोगोंने आपको छू दिया है, वे सभी आपके परि

चित हैं। ये लोग राज कर्मचारी हैं, इनमेंसे एकका नाम सिद्धार्थक है, और दूसरेका नाम समिद्धार्थक। खैर, कुछ भी हो इन लोगोंका आपको विशेष परिचय देना आवश्यक है। कारण इनलोगोंमेंसे कितने ही आपके अधीन कार्य कर चुके हैं। आपको अब मैं भेदकी सब बातें बतलाये देता हूं। चन्दनदासका हस्त-लिखित वह पत्र सिद्धार्थक, भागुरायण और आपका कपट मित्र जीवसिद्धि, वह तीनों आभूषण, इत्यादि सभी आपको कौशल पूर्वक हस्तगत करनेके लिए उपाय-स्वरूप व्यवहृत हुए थे। चन्दन दासपर अत्याचार भी इसी उद्देश्यसे किये गये थे, और उस जीर्णोद्यानके आत्म-जिघांसु व्यक्तिने भी इसी उद्देश्यके लिये वह अभिनय किया था। इन घटनाओंमें कुछ भी तथ्य नहीं हैं, सिर्फ आपको हस्तगत करनेके लिए ही इस षड्यन्त्रकी अवतारणा हुई थी। इस वक्त महाराज चन्द्रगुप्त आपके दर्शन प्रार्थी हैं, अनुग्रह करके वहाँ चलिए।"

राक्षसने कहा—"जब इसको छोडकर गत्यन्तर नहीं है, तब चलिए।"

तीनों व्यक्ति चन्द्रगुप्तके निकट जा पहुँचे। चन्द्रगुप्तने आसनसे गात्रोत्थान करके तीनों आदमियोंको प्रणाम किया। चाणक्यने चन्द्रगुप्तको राक्षसके साथ परिचित करानेके उद्देश्यसे कहा,—"वत्स, मेरी इच्छा पूर्ण हो गई है। यही सुयोग्य मन्त्री राक्षस हैं।"

चन्द्रगुप्तने अत्यन्त आह्लादित होकर फिर उन्हें प्रणाम

किया। राक्षसने चन्द्रगुप्तको आशीर्वाद देकर, उनके अनुरोधसे आसन ग्रहण किया। चाणक्य और चन्द्रभास भी आसनोंपर विराजमान हुए। चन्द्रगुप्तने कहा—"आपलोगों जैसे धुरन्धर पुरुष जब हमारे हिताकांक्षी हैं, तब हमारी ही जय है।"

चाणक्यने कहा, "मन्त्री प्रवर आप प्राण-रक्षाके लिए इच्छुक हैं क्या?"

राक्षसने सम्मति प्रदान की। चाणक्यने कहा—"आपने शस्त्र धारण न करके चन्दनदासको अनुगृहीत किया है, यह नहीं कहा जा सकता।"

राक्षसने कहा—"मैं अनुग्रह करनेके अयोग्य हूं।"

चाणक्यने कहा—"मैं योग्य और अयोग्यकी बातें नहीं कह रहा हूँ। मेरा निवेदन इतना ही है कि, शस्त्र धारण करके मन्त्रित्व ग्रहण किये बिना चन्दनदासको जीवन-रक्षाका उपाय नहीं है।"

नन्द वंशके प्रति राक्षसका प्रगाढ़ प्रेम था और चन्द्रगुप्त नन्द वंशके शत्रु थे। अथच उसी शत्रुका मन्त्रित्व ग्रहण करना होगा। लेकिन अनन्योपाय होकर इस अप्रिय कार्यको करना ही पडेगा। मित्रकी प्राण रक्षाका दूसरा उपाय नहीं है। अत उन्होंने मन्त्रि पद ग्रहण किया। इसी समय भागुरायण मलयकेतुको बन्दी करके ले आया। चाणक्यने कहा,—अब तो प्रधान मन्त्री राक्षस हैं, अतएव वे जो उचित विवेचना करेंगे, वही कार्य करेंगे।"

राक्षस—"मुझे यदि कुछ कहनेका अधिकार हो तो कहता हूँ, मलयकेतुको मुक्त करना ही कर्त्तव्य है।"

चन्द्रगुप्तने चाणक्यकी ओर देखा। चाणक्यने कहा—"मलयकेतुको मुक्त करके सम्मान-पूर्वक उनका पैतृक राज्य उन्हें प्रत्यर्पित करना होगा।" मन्त्री राक्षसके अनुरोध और चाणक्यकी सम्मतिसे मलयकेतुको मुक्ति प्रदान की गई और उनका अपना राज्य उन्हें प्रत्यर्पित कर दिया गया।

चाणक्यने चन्द्रगुप्तसे कहा—"चन्दनदासको मुक्त करके उनके पद गौरवकी वृद्धि कर दो। उन्हें नगर भरका श्रेष्ठ श्रेष्ठी नियुक्त कर दो। औरोंको भी बंधन मुक्त कर दो।"

चाणक्यकी आज्ञानुसार सभी मुक्त कर दिये गये। सभीके प्राण मुक्ति समीरणसे हिल्लोलित हो उठे। लोग चन्द्रगुप्त, चाणक्य, चन्द्रभास और राक्षसके प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करते हुए अपने अपने घर चले गये। चन्दनदासने आनन्द पूर्वक राक्षसका आलिंगन किया। अपूर्व प्रेम पुलकसे उनकी आँखे अश्रु सिक्त हो गईं।"

\+ \+ \+

आज चाणक्य और चन्द्रभासकी संसार यात्राका अन्तिम दिन है। उन दोनों गुरु शिष्योंने अबतक जो कुछ किया था, वह अपना कर्त्तव्य समझ कर। उनलोगोंने देशको पहचान लिया था। उन लोगोंमें देशात्म-बोध था। सिर्फ प्राणके आवेग अथवा क्रोधके वशवर्ती होकर ही उन्होंने नंद-वंशका ध्वंस नहीं

किया था। पापको, व्यभिचारको नष्ट करके पुण्य शिखा प्रज्वलित करनेके लिये ही उन लोगोंने ध्वंस-यज्ञका अनुष्ठान किया था। नन्द-वंशीय राजोंकी उच्छृङ्खलता और व्यभिचारोंने देशको पवित्रतामें विच्छिन्न कर दिया था। प्रजा-वर्गके दुःख दुर्दशा की ओर ये लोग दृक्पात न करते थे। अपने ही सुख स्वाच्छन्द्य और विलास सम्भोगको लेकर ही ये लोग मस्त रहते थे। यह देशके मुखमें कलंक-कालिमाका लेपन कर रहा था। इन सब कलंकोंको, अन्यायोंको अग्नि-ज्वालामें विदग्ध करके, उनलोगोंने सत्यतेजको प्रदीप्त कर दिया था। अयोग्य, विलासी राजाको सिंहासनच्युत करके महत, तेजस्वी भूपालको प्रतिष्ठित किया था, इन महायज्ञके होता रूपमें ही चाणक्यका जन्म हुआ था और इस कामको ही उन्होंने जीवनकी साधनाके रूपमें ग्रहण किया था। चाणक्यने स्वार्थको कभी बड़ा नहीं माना और न आत्म सुखको जीवनका आदर्श ही बनाया। समस्त त्याग करके उन्होंने इस साधनामें आत्म नियोग किया था। अगर वे स्वार्थ को, आत्म-सुखको ऊँचा करके मानते तो अनायास ही चन्द्रगुप्तको सिंहासन च्युत करके स्वयं सिंहासनपर आरोहण कर सकते थे। विरोधको अगर ऊँचा करके मानते तो, युद्धमें आये हुए राक्षसका कठोर दण्ड विधान करते, लेकिन उन्होंने ऐसी क्षुद्रता नहीं की। उनके प्रत्येक कार्यसे उनकी महत्ता प्रतीत होती है। ब्राह्मणोंके करने योग्य कार्यों को ही उन्होंने सम्पन्न किया था। अयोग्यको विताड़ित करके योग्य व्यक्तिको सिंहासनपर प्रतिष्ठित किया था।

चन्द्रगुप्त द्वारा अपमानित होकर भी उन्होंने मंत्रित्वका त्याग नहीं किया, इसका कारण उनकी स्वार्थ-परता नहीं है। आत्म प्रतिष्ठाके लिए नहीं, प्रत्युत उनकी साधना तबतक समाप्त नहीं हुई थी, इसलिए। और सिद्धि प्राप्त नहीं हुई थी इसलिए भी। वे अपना कार्य समाप्त कर, योग्य व्यक्तिके हाथोंमें मंत्रित्व भार सौंप, स्वयं, अपने गुरुके साथ वानप्रस्थका अवलम्बन कर वनको चले गये। आह! कितना बड़ा स्वार्थ त्याग था। ऐहिक वासनाको, पद-दलित करके, आयास लब्ध लक्ष्मीका तिरस्कार करके, पारलौकिक, आत्म कल्याणके लिए, ब्राह्मणोचित कार्यका सम्पादन करनेके लिए चाणक्यने वनवास स्वीकार किया।

चन्द्रभास जैसे गुरु थे, चाणक्य वैसे ही उनके उपयुक्त शिष्य थे। चन्द्रभास स्वार्थ शून्य, बुद्धिमान, और अन्याय द्रोही व्यक्ति थे। न्याय-परायणता तो उनकी नस नसमें भरी हुई थी। वे सिर्फ एक मुट्ठी तंडुल भक्षण करके जीवन धारण करते थे। धन सम्पत्ति और स्वार्थसे यथासंभव दूर रहकर उन्होंने सत्कार्यों में आत्म नियोग किया था। नन्द वंशके ध्वंसका मूल कारण सिर्फ चाणक्य ही थे, चन्द्रभासने ही उनको इस कार्यके योग्य बनाया था।

पार्थिव कर्त्तव्योंके अवसानके पश्चात् चाणक्यने सांसारिक कोलाहलसे दूर जाकर, ज्ञान दृष्टिको अन्तर्मुखी करनेकी साधना-में नवीन उत्साहसे, स्थिर चित्तसे आत्म-नियोग किया।

सांसारिक अभिज्ञता चाणक्यके यथेष्ट थी। वे राजनीति

शास्त्रके अतुलनीय पंडित थे। अपने पांडित्यका यथेष्ट निदर्शन वे रख गये हैं। विष्णु पुराण प्रभृतिमें उनका नामोल्लेख है। उन पुस्तकोंमें चाणक्यके अनेक नाम पाये जाते हैं। यथा विष्णु गुप्त, पक्षिल स्वामी मल्लनाग प्रभृति। उनके जैसा नीति-शास्त्र पंडित साधारणतः देखा नहीं जाता। उनका लिखा हुआ नीति-शास्त्र आज भी घर घरमें पठित होकर उनकी कीर्त्तिकी घोषणा कर रहा है। 'वृद्ध चाणक्य', बोधिकाचाणक्य, और लघु चाणक्य नामक उनके और भी तीन ग्रन्थ हैं। ज्योतिष शास्त्रमें भी उनका यथेष्ट ज्ञान था, 'विष्णु-गुप्त सिद्धान्त' नामक उनका एक ज्योतिष ग्रन्थ भी है। उनके लिखे हुए 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के सम्मुख अभिनव अर्थ शास्त्रज्ञ और राजनीतिज्ञ बड़े आदरसे सिर झुकाते हैं। इस ग्रन्थके प्रकाशित होनेके बादसे इसपर बहुत टीका टिप्पणी हो चुकी है। वात्स्यायनके नामसे "उन्होंने काम-सूत्र"-नामक एक अति उपयोगी ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ परम उपादेय और अति अद्भुत है। वस्तुत यह बहुत ही अद्भुत ग्रन्थ है। चाणक्य आदर्श ब्राह्मण थे। वे स्वार्थका सम्पूर्ण रूपसे विसर्जन कर सके थे। उनके सम्पूर्ण जीवनका मूल मन्त्र था, देश-सेवा और धर्म राज्यकी प्रतिष्ठा। इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उन्होंने कभी कभी कठोरता और कपटताका भी अवलम्बन किया था। साधारण प्रचलित नीति शास्त्रके नियमोंके अनुसार सम्भव है, उनका यह कार्य दूषित माना जाये, लेकिन चाणक्यके अपने नीति शास्त्रके अनुसार यह कार्य दूषित नहीं है। वस्तुत

जो लोग बलवान् हैं, उनलोगोंके कार्य साधारण नीति शास्त्रकी दृष्टिसे विचार करने योग्य नहीं है, कारण वे लोग इन नियमोंका अपवाद होते हैं। अत ऐसे विचारसे उनलोगोंके प्रति अन्याय होनेकी सम्भावना रहती है। भगवान् श्रीकृष्णका कार्य हमलोगोंमें प्रचलित नीति शास्त्रके अनुसार विचारणीय नहीं है। नेपोलियन, बिस्मार्क और वाशिंगटन इत्यादिके सम्बन्धमें भी यही नियम मान्य है। ये लोग वीर थे, अन्याय और अत्याचारोंके विरोध करनेमें ही इन लोगोंका जीवन अतिवाहित हुआ था। प्रचलित शास्त्रके अनेक विधानोंकी इनलोगोंको उपेक्षा करनी पड़ती थी। चाणक्यने भी ऐसा ही किया था। दाम्भिक चाणक्य, क्रूर चाणक्य, गर्वित चाणक्य, शठ चाणक्य, और कुटिल चाणक्यके बिना अत्याचारी नन्द वंशका ध्वंस होकर भारत-गौरव मौर्य वंशकी प्रतिष्ठाका होना सम्भव नहीं था। चाणक्य न्याय और धर्मके वीर उपासक थे। उनके निकट दुर्बलतासे बढ़कर कुछ भी महापाप न था, और न सबलतासे बढ़कर धर्म। अधर्मके बदले धर्मकी प्रतिष्ठाके लिए विप्लवके युगमें न्याय और सत्यके ऐसे ही वीर उपासकोंकी आवश्यकता है।



चाणक्यकी युद्ध-नीति ।

आधुनिक जर्मन राष्ट्रवादियोंकी तरह कौटिल्यका भी सामरिक बलके प्राधान्यमें विश्वास था। अर्थशास्त्रमें उन्होंने सामरिक शक्तिको राष्ट्र शक्तिकी अन्यतम भित्ति स्वीकार की है। दण्ड शब्दकी अर्थ शास्त्रमें बहुत प्रशंसा है। एक प्रकारसे तो यह राज्य शक्तिका मूल कारण माना गया है। दण्ड शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। अनेक स्थलोंपर दण्ड शासनके अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। वह शासन—जिसके द्वारा यथेच्छा चार निवृत्त होता है, और लोग नियमके वशीभूत होकर परस्परकी हिंसा प्रभृतिसे विरत होते हैं। इस दण्ड, शासनके परिचालनके लिए राजाकी जरूरत होती है। और राजा अपनी शक्तिको यथा यथ भावसे परिचालित करनेके लिए सैन्य सामन्त इत्यादि रखते थे, यह भी दण्डके नामसे अभिहित होते थे।

दण्डके अभावमें राज-शक्तिका लोप हो जाता है। कौटिल्यका कहना है—"दण्डाभावे च ध्रुवं कोप विनाश, कोपाभावे च

शत्रु कुप्येन भूम्या परभूमिं स्वयं मद्देण घा दण्ड परं गच्छति, स्वामिनं घा हन्ति।"

एक ओर जैसे राज्यमें शान्ति-स्थापनके लिए, राजशक्तिके परिचालनके लिए, सैन्य सामन्तका प्रयोजन होता है, उसी प्रकार दूसरी ओर वैदेशिक शत्रुओंके आक्रमणसे राज्य अथवा स्वाधीनताकी रक्षाके लिए भी सैन्य बलका प्रयोजन होता है। भारतीय दार्शनिकोंके मतानुसार सैन्य-बल राज्यकी अन्यतम प्रकृति अथवा सघटोपादान नामसे अभिहित होता था। आजकल भी सैन्य, सामन्त (Army, Navy, National defence force) के विना राज्य सघटित नहीं होता।

कौटिल्य सामरिक बलपर विशेष आस्था प्रकाशित कर गये हैं। उनका कथन है, "समश्चेन्न सधिमिच्छेत् यावन्मात्रमपकुर्यात्ताव मात्रस्य प्रत्यय कुर्यात्। तेजो हि सधान कारण नातप्तं लोह, लोहेन सन्धत्ते।" अर्थात् बल या शक्ति ही सन्धिका मूल कारण है। दो टुकडा लोहा गर्म हुए विना सयुक्त नहीं होता। बात बिल्कुल ठीक है। एक व्यक्तिके अनिष्ट करनेपर उसकी विपक्षता करनेका सामर्थ्य न होनेपर दूसरे मनुष्यको अत्याचार पीडित होना पडता है।' और जब अपकारका प्रतिदान कर सकता है, तभी शत्रु भीत होकर सन्धिप्रार्थी होता है। यद्यपि आजकल अनेक दार्शनिक इस बातको नहीं स्वीकार करते तथापि यह बात, Clausurtz और Bernherdı प्रभृति नव्ययुगके जर्मन-राजनीतिज्ञोंके मुँहसे सुनी जाती है।

नैपोलियन भी कहा करता था—"सैन्य-बल ही सन्धिका प्रतिष्ठाता है।"

चन्द्रगुप्तके गुरु चाणक्यके अर्थशास्त्र और प्रोफ् विवरणकी सहायतासे हम उस जमानेकी सैन्यकी अनेक बातें जान सकते हैं। 'चाणक्य' के पाठकोंकी सुविधाके लिए हम उसे पाच भागोंमें विभक्त करते हैं—(१) सैन्य संख्या और विभाग, (२) नौबल, (३) रसद वगैरह इकट्ठा करनेवाला विभाग, (४) चर-बल और आनुषंगिक बल, (५) चिकित्सा विभाग। मौर्य राज चन्द्र-गुप्तके कितनी सैन्य-संख्या थी, यह हम सातवें परिच्छेदमें लिख आये हैं। अर्थ शास्त्रमें इस विषयका कोई उल्लेख नहीं हैं, कि चन्द्रगुप्तके पास कितनी सैन्य संख्या थी। लेकिन सैन्य दल हाथी, रथ, अश्व और पदाति इन चार भागोंमें विभक्त था। यह सेनाका चतुर्भाग बहुत प्राचीन हैं। रामायण और महाभारतके युगमें भी यह था।

सैन्य-संग्रह—अर्थ शास्त्रके पढनेसे प्रतीत होता है कि, बलवान् नरपतियोंकी वाहिनी निम्नलिखित पाच प्रकारकी सैन्यसे संघटित होती थी। (१) मौल (२) भृतक (३) श्रेणी बल (४) मित्र बल और (५) अटवी बल (कौ० सू०)।

"मौल भृतक श्रेणी मित्रामित्राटवी बलाना समुद्दान काल। (महाभारत आ० प० ७ अध्याय—आदर्शं बलं राजा मौलं मित्र बलं तथा, अटवी बल भृतंचैव तथा श्रेणी बलं प्रभो।"

"मौल, शब्दसे चिरकाल पोषित अपनी सैन्य प्रतीत होती है।"

देशी अथवा विदेशी पुरुषोंको धन देकर 'भृतक' सैन्य संघटित होती थी और राष्ट्रस्थ श्रेणी-वर्ग राजाकी सहायताके लिए जो फौज भेजता था, वही 'श्रेणी-बल' के नामसे अभिहित होती थी। श्रेणी बलकी विशेषता यह थी कि, ये लोग अधिक दिनतक युद्ध क्षेत्रमें न रहते थे। कौटिल्यका मत है कि, ह्रस्व प्रवास-कालमें ही श्रेणी बलका नियोग करना चाहिए।" मित्र-बलको (Allied Contingent) मित्र राजाकी सेना कहा जा सकता है। अन्य सामन्त राज-गण द्वारा प्रेषित सैन्य 'अटवी-बल' नामसे अभिहित होती थी।

सैन्य-संग्रह (Recruiting)।

उस समय आजकलकी तरह 'बाध्यता-मूलक' 'रण शिक्षा' अथवा युद्धमें नियोगकी व्यवस्था नहीं थी। लेकिन क्षत्रियोंमें युद्ध विद्या शिक्षा जातीय धर्ममें परिगणित थी। कौटिल्यने क्षत्रिय बलको ही श्रेष्ठ बल माना है। किन्तु ब्राह्मण तथा दूसरे वर्णवाले सेनामें नहीं प्रविष्ट होते थे, यह नहीं कहा जा सकता। कौटिल्यने अनेक कारणोंसे क्षत्रिय सैन्यको प्राधान्य दिया है, उनका मत यह है—"प्रणिपातेन ब्राह्मण-बलं परोभिहारयेत् प्रहरण विद्या विनीतं क्षत्रिय बल श्रेयः, बहुल सार वा वैश्य शूद्र-बलम्" अर्थात् शत्रु शिर-झुकाकर तथा प्रणाम करके ब्राह्मण सेनाको शीघ्र ही अपने वशमें कर लेता है। लड़ाईके लिए तो शिक्षित क्षत्रियोंकी सेना ही उत्तम है। अधिक संख्यामें वैश्यों तथा शूद्रोंकी सेना भी ठीक है।"

साधारणत पैदल फौजकी संख्या अधिक होती थी। अन्य प्रकारके योद्धवृन्दसे पदातियोंकी मर्यादा कम थी, ऐसा प्रतीत होता है। उनलोगोंका वेतन भी कम था। ये लोग साधारणत धनुर्बाण, तलवार अथवा भाला इत्यादिसे लड़ते थे। किसी किसी दलके लोग कवचावृत्त होते थे। पैदलोंके बाद ही घुड़सवारोंका स्थान था, अश्वारोही भी वर्मावृत (Heavy armed) और साधारण दो प्रकारके होते थे।

इन लोगोंके आगे स्थान था, हस्ति सैन्य का। हाथियोंके बाद रथियोंका दर्जा था। हाथी भी कवचसे ढक दिये जाते थे। एक हाथीकी पीठपर महावतके अतिरिक्त ३।४ अथवा ततोधिक योद्धाओंका स्थान होता था। रथ भी कवच मण्डित होते थे। रथाध्यक्ष अध्यायमें रथका दैर्घ्य, प्रस्थ और उच्चत्व लिखा हुआ है। एक एक रथ लम्बाई चौड़ाईमें १२० अगुलका होता था। प्रति रथमें कितने घोड़े योजित होते थे, यह अर्थ शास्त्रमें कहीं नहीं लिखा हुआ है। सम्भवत दोही घोड़े नियुक्त किये जाते होंगे।

सैनिक शिक्षाके लिए विशेष व्यवस्था थी। उन लोगोंको योग्य शिक्षकके तत्वावधानमें नित्य अस्त्र शिक्षा और व्यायाम शिक्षा दी जाती थी। तीर-निक्षेप, गदा-चालन, असि चालन और बल्लमका प्रयोग विशेष ढंगसे सिखलाया जाता था। रथियोंको भी उसी तरह तीव्र वेगसे रथ चलाने, रथ युद्धमें शत्रुओंका पराभव करने और घोड़ोंकी गति संयमनादि करनेको शिक्षा दी जाती थी।

युद्धमें व्यवहृत पशुओंकी शिक्षाके लिए भी यथेष्ट व्यवस्था थी। हाथियोंके सम्बन्धमें कौटिल्यने विशेष विवरण दिया है, उनलोगों-को उपस्थान, सवर्त्तन, सयान, शत्रु-मथन और वधावधादि सात प्रकारकी शिक्षा दी जाती थी। हाथियोंको भी लोहेके वर्मसे मण्डित किया जाता था। हाथियोंपर अस्त्र रखनेका प्रबन्ध किया जाता था। हाथियोंकी चिकित्सा, खाद्यादि पर्यवेक्षण और औषधादि प्रयोगकी भी समस्त व्यवस्था थी। सिन्धु, काम्बोज, वनायु प्रभृति स्थानोंके उत्कृष्ट घोड़ोंको चुनकर मंगाया जाता था और उनको विशेष शिक्षा दी जाती थी। वे जिससे युद्ध कालमें डर न जाँय, इसकी शिक्षा भी दी जाती थी। अर्थशास्त्रके बहुतसे स्थानोंमें अश्वदमक, अश्वचिकित्सक प्रभृतिका नामोल्लेख पाया जाता है। हाथी घोड़ोंके अतिरिक्त बैल, साड और खच्चर इत्यादि भी सैन्य विभागमें रक्खे जाते थे। इनके आहारका परिमाण तथा अन्य आवश्यक समस्त व्यवस्था अर्थशास्त्रमें लिखी हुई है। समय समय पर, घोड़ोंके अभावमें अथवा अन्य किसी कारणवश रथ-चलानेमें ये भी नियुक्त होते थे। बैलोंको खानेके लिए मांस रख दिया जाता था, और नस्य (सूँघने) के लिए तेल देनेकी व्यवस्था थी।

प्रतिदिन प्रात काल एक एक दल सैन्यकी प्रदर्शिनी होती थी। सैन्य परिदर्शन प्रात्यहिक राज कर्त्तव्योंमें गिना जाता था।

इसका उल्लेख हम सातवें परिच्छेदमें कर चुके हैं, यथा—

"सप्तमे हस्त्यश्वरथायुधीयान पश्येत्—अष्टमे सेनापति सखो विक्रम चिन्तयेत्।"

कौटिल्यने इस परिदर्शन-व्यापारमें प्रत्यह राजाको उपस्थित होनेके लिये लिखा है—यथा, पत्त्यश्व,रथद्विपा सूर्योदये बहि सन्धि दिवस वर्जं शिल्पयोग्या कुर्यु, तेषु राजा नित्य युक्त स्यात् अभीक्ष्ण चैष्ट शिल्प दर्शनं कुर्यात्।"

अस्त्र-व्यायाम या करायद-परेडके बाद अस्त्र शस्त्र फिर राजकीय आयुधागारमें रख दिये जाते थे। जबतब अस्त्र इत्यादि लेकर हाट-बाटमें घूमनेकी सैनिकोंको आज्ञा नहीं थी। सैनिकोंके आहार और चिकित्सा इत्यादिकी भी यथेष्ट व्यवस्था थी। अर्थ शास्त्रमें अन्नका जो परिमाण लिखा हुआ है, वह आजकल विशेष आलोचनीय है। आजकल निरन्न भारतवासी दूध और मांस वगैरहसे वंचित होकर जिस प्रकार अल्पाहारमें दिन अतिवाहित करते हैं, वह भी हमारे शारीरिक बलके अपचयका—हमारी शारीरिक शक्तिके ह्रासका एक प्रधान कारण है। बौद्ध और जैन प्रभृति धर्मों की शिक्षाके कारण मांसाहारको तो प्राय लोग घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। लेकिन उस युगकी सभी बातें भिन्न थीं। उन दिनों तृण भोजन करके स्वर्ग लाभकी आकांक्षा आजकलकी तरह बलवती नहीं हुई थी।

प्रत्येक विभागमें एक अध्यक्ष और उसके मातहत अनेक कर्मचारी रहते थे। ये लोग फौजियोंके आहार्य-दान, चिकित्सा और वेतन आदिका हिसाब रखते थे। प्रतीत होता है कि, सेना

नायकोंके कार्यसे इनका कार्य पृथक् होता था। वेतन—सैनिकोंको वेतनमें नकद रुपयोंके देनेकी व्यवस्था थी। भूमिदानकी भी व्यवस्था थी।" राजाके पास द्रव्यका अभाव होनेपर भूमिदान अथवा आहार्यादि देनेकी व्यवस्था करनेको कौटिल्यने लिखा है—"अल्पकोव कुप्य, पशुक्षेत्राणि दद्यात्, अल्पञ्च हिरण्यं शून्यं चानिनेशयितु -अभ्युत्थितो हिरण्यमेव दद्यात्।"

खाली पड़ी हुई जमीनमें सैनिकोंको उपनिवेश स्थापित करके रहनेकी अनुमति भी दी जाती थी।

किसी किसी गाँवमें कर (Tax) लेनेके बदले प्रजासे युद्ध-कार्य करा लिया जाता था। प्रतीत होता है, कि ऐसे गाँवोंमें और किसी प्रकारका कर नहीं था। कौटिल्यने ऐसे गाँवोंको 'आयुधीयक' संज्ञा प्रदान की है। सैनिकोंके वेतनके परिमाणके सम्बन्धमें कुछ नहीं लिखा। हाँ, शिक्षित पदातिकोंको ५ शत पण सालाना देनेकी व्यवस्था लिखी हुई है और उनलोगोंके भिन्न भिन्न अध्यक्षोंको वार्षिक ८ हजार पण-देनेकी व्यवस्था थी।

हाथी, घोड़ा, रथ और पैदलोंको छोड़कर नौ विभाग और रसद विभागकी विशेष व्यवस्था देखी जाती है। नौ दलकी बातें नावाध्यक्ष अध्यायमें विवृत हैं। नावाध्यक्षको अनेक प्रकारसे कार्य करने पड़ते थे। वे और उनके अधीनस्थ राज कर्मचारी गण राज-पोत अथवा नौदुर्गमें अवस्थित होकर सामुद्रिक वणिग् जनोंसे कर वसूल करते थे। तर देय (Ferry due) संग्रह करते थे। जल-दस्युओंका निवारण करते थे। नौ व्यसनमें

विपन्न दुर्गोकी रक्षा करते थे, और जल-मार्गमें डाकुओं, विद्रोहियों, अकारण-गृहत्यागियों और कपट वान प्रस्थियोंको गिरफ्तार करते थे। समुद्र तटपर और प्रधान प्रधान नदियोंके किनारे उन लोगोंके सिपाही और जहाज वगैरह रहते थे, ऐसा प्रतीत होता है।

रसद विभागकी बातें विशेष उल्लेखनीय हैं। इस कामके सम्पर्कमें कुछ विभागों और कुछ कर्मचारियोंकी बातें विस्तृत भावसे कहना आवश्यक है। भिन्न भिन्न विभागीय कर्मचारियोंके हाथमें विभिन्न कार्योंका भार न्यस्त रहता था। उनमेंसे कुछ लिखे जाते हैं।

आयुधागाराध्यक्ष—इनकी देख रेखमें अस्त्र, शस्त्र, रथ और यन्त्र आदि निर्मित होते थे। कारीगर बराबर लगे रहते थे। अस्त्र शस्त्रादिकोंमें राजाका नाम और मोहर ही अंकित रहती थी। 'आयुधागाराध्यक्ष' के अध्यायमें निम्नलिखित अनेक यन्त्रोंका उल्लेख पाया जाता है।

धनुष साधारणतः बाँस, रमनीयकाष्ठ अथवा सींगसे बनाया जाता था।

बाण काठके बनाये जाते थे, और उनके अग्रभागमें लोहेका तीक्ष्ण फल लगा रहता थी। ये लगभग ३।४ हाथ लम्बे होते थे। और दूब, सन, और तात वगैरहकी रस्सी (ज्या) लगी रहती थी। इसके अलावा योद्ध-पुरुष शक्ति, प्रास, शूल, भिन्दिपाल, हाटक और तोमर इत्यादि तीक्ष्णाग्र अथवा शाणिताग्र अस्त्रोंका

व्यवहार करते थे। तलवार या खड्‌ग भी कई प्रकारके थे। उनमेंसे निस्त्रिंश, मण्डलाकार और असि यष्टि प्रभृति उल्लेख योग्य हैं। किलेकी रक्षामें भी अनेक प्रकारके यन्त्रोंका व्यवहार होता था।

घूमते हुए 'सर्वतो भद्र' नामक यन्त्रसे बड़े बड़े पत्थर शत्रुओंपर फेंके जाते थे। इसी तरह 'जामदग्न्य' नामक यन्त्रसे एक साथ ही बहुतसे तीर शत्रुओंपर फेंके जा सकते थे। 'बहुमुख' नामक घूमते हुए क्षुद्र काठ घरसे भी पूर्वोक्त प्रकारसे शत्रुओंपर बाण-वर्षा की जाती थी। और दुश्मन किलेकी परिखाको जब पार करने लगता था तो 'उर्द्ध्व-बाहु' और 'अर्द्ध-बाहु' नामक यन्त्र पातन करके उनलोगोंका विनाश किया जाता था। उसी तरह सघाती और फलक द्वारा शत्रुओंका विध्वंस अथवा दुर्गमें अग्नि-प्रदान किया जाता था। और आगके बुझानेमें 'पर्जन्यक' यन्त्रका व्यवहार होता था।

'पाचालिक' नामक यन्त्रमें बहुतसे मुख हुआ करते थे। उसे जलमें डुबाकर उसके द्वारा एक ही बारमें अनेक शत्रुओंका निपातन किया जाता था। 'देव दण्ड' 'शूकरिक' और 'मूषल' प्रभृतिका भी इसी तरह व्यवहार होता था। "तीक्ष्ण मुख' हस्ति-वारक द्वारा शत्रुओंके हाथियोंका निवारण किया जाता था। 'ताल वृन्त' नामक यन्त्रका व्यवहार कैसे होता था यह नहीं मालूम होता। मालूम होता है, वह खूब तीक्ष्ण, शाणित धातुमय चक्र था। मुद्गर और गदा इत्यादिके आघातसे शत्रु चूर्ण विचूर्ण किये जाते थे।

'कुद्दाल' यन्त्रसे दुर्ग-भेद किया जाता था। उद्घातिम यन्त्रसे अट्टालक भंग किये जाते थे। शतघ्नी नामक घूमते हुए यन्त्रके साहाय्यसे शत्रुओंके प्रति शस्त्र निक्षेप किया जाता था। कवचोंका व्यवहार भी खूब होता था। कौटिल्यने लौह आलिकपट्ट, और सूत्रक आदिका उल्लेख किया है। उनमेंसे शिरकी रक्षाके लिए शिर-शिरस्त्राण, कण्ठोंकी रक्षाके लिए कण्ठकावरण, देह रक्षाके लिए कूर्पास, कञ्चुक और वारवाणका विशेष उल्लेख देखा जाता है। दुर्ग-रक्षा और अवरोध भंगकी विशेष व्यवस्था थी। किलेके चारों ओर जल पूर्ण परिखा रहती थी। आकार और प्राचीर द्वारा दुर्गकी रक्षाका प्रबन्ध था। किलेमें सब तरहकी प्रयोजनीय सामग्रियोंका सञ्चय रहता था। दुर्गके विशेष विशेष स्थानोंपर शत्रुओंकी गति-विधिका लक्ष्य करनेके लिए पहरेदारोंको नियुक्त किया जाता था। दुर्ग-भंग करनेमें अनेक प्रकारके विस्फोटक पदार्थों का व्यवहार होता था। उन सबका अर्थ शास्त्रमें विस्तृत विवरण लिखा हुआ है। अनावश्यक होनेके कारण उनका यहाँपर उल्लेख नहीं किया।

\+ + + +

लेकिन एक बात आश्चर्यजनक है। वह यह कि कौटिल्य अग्नि-युद्धके विरोधी थे। आजकल लोग कौटिल्यको अनेक तरहकी गालियां दिया करते हैं, पर उनके मतामतको समझ लेनेपर उनकी उदारताको धन्यवाद देनेको जी चाहता है। उनका स्पष्ट कथन है—

"नत्वेव विद्मानि पराक्रमेऽग्नि मवस्रुजेत्—अविश्वास्यो ह्यग्नि दैवपीडन च। अप्रति संघात प्राणिधान्य पशु हिरण्य कुप्य द्रव्यक्षयकर। क्षीण निचयं चावाप्तमपि राज्यं क्षयायेव भवति—"

अर्थ शास्त्रके अनेक स्थलोंमें अष्टादश वर्गका उल्लेख पाया जाता है। इनमें एक दलका नाम था—वर्द्धकी। ये लोग आधुनिक Engineer corps का जो कार्य है, वही करते थे। राह घाट निर्माण करना, तम्बू गाड़ना, सैन्य निर्याण-समयमें वासस्थान निर्माण करना, और कूप खनन इत्यादि उनका कार्य होता था। फौजके साथ एक दल चिकित्सकोंका भी रहता था। इस दलमें अनेक श्रेणीके मनुष्य रहते थे। एक दल युद्ध कालमें आहतों और रोगियोंकी सेवामें नियुक्त रहता था, स्त्रियोंका समूह भी अन्नपानादिद्वारा आहतोंकी सेवामें व्यापृत रहता था। "चिकित्सका शस्त्रयन्त्रा गदस्नेह वस्त्राहस्ता स्त्रियश्चान्न पान रक्षिण्य पुरुषाणामुद्धर्षणीया पृष्ठतस्तिष्ठेयु।"

इन लोगोंके अलावा सूत मगध वगैरह भी सैन्य दलमें रहते थे। ये लोग युद्ध-कालमें उद्दीपना जनक श्लोक आदि अथवा संगीत इत्यादिके द्वारा सैनिकोंका उत्साह वर्द्धन करते थे।



१

उपसंहार

महामति चाणक्यके बनाये हुए आजकल जो ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं, उनमें ३ तीन मुख्य हैं, (१) कौटिलीय अर्थशास्त्र, (२) वात्स्यायनीय काम शास्त्र और चाणक्य नीति। इस पुस्तकका 'शासन नीति' 'और रण नीति' शीर्षक परिच्छेद कौटिलीय अर्थ शास्त्रके आधारपर लिखा गया है। अर्थशास्त्रमें लिखी हुई सभी बातें जानने लायक हैं, लेकिन इस छोटी सी पुस्तकमें उन सब बातोंका, उनका संक्षिप्त आशय लिखनेको भी स्थान नहीं है। अतएव जितना कुछ विवरण अर्थ शास्त्रसे दिया गया है, उतने हीसे सन्तोष करना पड़ा। वात्स्यानीय काम सूत्रको कितने लोग चाणक्यका बनाया हुआ नहीं मानते हैं, परन्तु अब सुदृढ़ प्रमाणों से यह बात निश्चय हो चुकी है कि वात्स्यायन चाणक्यका गोत्र था, और उसीके नामसे चाणक्यने इस बृहत् और उपयोगी ग्रन्थका निर्माण किया। यह ग्रन्थ अर्थशास्त्र जैसा ही बड़ा और उसी जैसा महत्वपूर्ण है। स्थानाभावसे उसका परिचय भी यहाँ नहीं दिया जा सकता। चाणक्य नीति घर घर प्रचलित है, अतः उसका परिचय देना व्यर्थ समझकर छोड़ दिया गया है। इन थोड़ेसे पन्नो में मनीषी चाणक्यकी कुछ चर्चा मात्र की गई हैं। कौटल्यपर लिखनेके लिए बड़े समय, सामर्थ्य और विद्याकी जरूरत है, हमारे पास इनमेंसे एक भी नहीं है। हमने तो चाणक्य चरित कीर्तन करके पुण्य-प्राप्त करनेका प्रयास किया है। इन शब्दों के साथ इस पुस्तकको समाप्त करते हैं।

पुस्तक मिलनेके पते ।

कलकत्ता—पाठक एण्ड कम्पनी, ७३ वी वाराणसी घोष स्ट्रीट
निहालचन्द एण्ड को, १ नारायण प्रसाद बाबू लेन
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, १२६ हरीसन रोड
हिन्दी साहित्य भवन, कुकबिल्डिंग, हरीसन रोड

बनारस—लहरी बुकडिपो-बुलानाला
मनमोहन पुस्तकालय, नीची बाग
मास्टर खिलाड़ीलाल, संस्कृत बुकडिपो
हिन्दी साहित्य मन्दिर, चौक

लखनऊ—गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, २९ ३० अमीनाबाद

पटनाजंक्शन—राजेश्वरी प्रसाद बुकसेलर

मुजफ्फरपुर—वर्मन कम्पनी, पुरानी बाजार

मथुरा—बाबू किशनलाल, बम्बई भूषण प्रेस
फेण्ड एण्ड कम्पनी

गया—रामसहाय लाल बुकसेलर

इलाहाबाद—चाँद कार्यालय

गोरखपुर—मथुराप्रसाद किशनचन्द, रेतीचौक

दिल्ली—सर्वहितैषी व्यापार मण्डल, दरीबा कलां,

बरेली—जे० के० एण्ड सन्स
आर्य ग्रन्थ रत्नाकर

कानपुर—चुन्नीलाल गौड, गौड पुस्तकालय, चौक
प्रकाश पुस्तकालय, फीलखाना

अमृतसर—तीरथराम जोशी, बाजार माइसवाँ
लाजपतराय एण्ड सन्स,

लाहौर—लाजपतराय एण्ड सन्स, लाहौरी गेट
मोतीलाल बनारसीदास, सैद मीठा बाजार
मेहरचन्द लक्ष्मणदास बुकसेलर

बम्बई—हिन्दीग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय
गान्धी पुस्तक भण्डार, कालबादेवी रोड

आरा—वीर मन्दिर,

सीकर—बाबू हरदत्तराय सिंहानिया, रामगढ़

गुजराँवाला—हरनाम पुस्तकालय, महराया वाली गली

हरदोई—दीन दयाल मिश्र

बाँसवाड़ा—लक्ष्मणदास जानकीदास बैरागी सद्धर्म वर्धक
पुस्तकालय।

मुरादाबाद—व्यास ब्रदर्स बुकसेलर्स अमरोहो गेट

खड़गपुर—साहित्य निकेतन, गोलबाजार

राँची—सुबोध ग्रन्थमाला कार्यालय राँची